भूमिका[1]

लाओ-त्स द्वारा रचित चीनी भापा के सुप्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ 'ताओ ते-चिंग' का अब तक ससार की कई भाषाओ मे अनुवाद हो चुका है, और अनेक बार विद्वानो ने इस पर चर्चा भी की है। फिर भी इसके लेखक अथवा विषय-वस्तु के सम्बन्ध मे वे एकमत दिखाई नही देते।

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर ज्ञात होता है कि ईसा के पूर्व लगभग प्रथम शताब्दी तक चाउ और छिन राजवशो के प्राचीन ग्रन्थो मे निस्सदेह लाओ-त्स की उसी रचना का उल्लेख है जिसे हम आज जानते हैं। ये ग्रन्थ इससे सहमत हैं कि प्राचीन काल मे लाओ-तान नामक एक महान् विद्वान् हो गया है, जिसे लाओ-त्स भी कहा जाता था, तथा प्रचलित मान्यता के अनुसार स्वय कनफ्यूशियस ने उससे भेंट करके उपदेश ग्रहण किया था।

ई० पू० प्रथम शताब्दी के आरम्भिक काल मे मौजूद प्रसिद्ध इतिहासकार स्सुमा-छिएन ने इन धारणाओ से सहमत होते हुए कहा है कि लाओ-त्स छू के दक्षिण राज्य का निवासी था तथा चाउ राजवश के

---

१. साहित्य अकादेमी दर्शनशास्त्र की चीनी सस्था के प्रोफेसर वाग वेइ-छौं की ऋणी है उनकी विद्वत्तापूर्ण भूमिका के लिए, जिसे उन्होने साहित्य अकादेमी द्वारा आयोजित भारतीय भाषाओ के इस चीनी क्लासिक सस्करण के लिए खास तौर से लिखा है। यह भूमिका भारतीय पाठको के लिए विशेष रूप से रुचिकर होगी, क्योकि इसमे न केवल इस प्राचीन क्लासिक के लेखक और उसके ग्रन्थ-सम्बन्धी आधुनिकतम खोजो का साराश दिया हुआ है, बल्कि जनवादी चीन द्वारा स्वीकृत नई विचार-धारा के प्रकाश मे इसके तात्पर्य का भी यहाँ पुन मूल्याकन किया गया है। मूल भूमिका बहुत लम्बी थी, इसलिए हम डॉक्टर वी० गोखले के आभारी हैं, कि जिन्होने उसे सक्षिप्त करके वर्तमान रूप दिया।

काल मे वह इतिहासकार रहा, जो अवकाश प्राप्त करने के वाद सन्यासी हो गया। लाओ-त्स के जीवन-चरित के अन्त मे उसने तीन अन्य परम्पराओ का उल्लेख किया है। पहली परम्परा के अनुसार लाओ-त्स को लाओ लाइ-त्स के रूप मे स्वीकार किया गया था, जो छ राज्य का नागरिक, कनफ्यूशियस का समकालीन और ताओवादी लेखक था। दूसरी परम्परा के अनुसार, चाउ राजवश के एक अन्य इतिहासकार थाइ शिह-तान को ही, जो कनफ्यूशियस की मृत्यु के १२९ वर्ष वाद जीवित रहा—लाओ-त्स माना गया है, जो ताओ मत का पालन करके १६० वर्ष से अधिक जीवित रहा। तीमरी परम्परा, इन्ही आधारो पर, लाओ-त्स को लि-अर मानकर चलती है, इसमे उसके पुत्र के विपय मे कहा गया है कि वह कनफ्यूशियस की मृत्यु के लगभग २०० वर्ष वाद वेइ राज्य का सेनापति रहा। इम प्रकार इतिहासकार स्सु मा-छिएन ने, लाओ त्स-सम्वन्धी प्रचलित परम्पराओ को, सभवत प्रामाणिकता के साथ लिपिवद्ध किया है, चाहे उस विपय मे उन्हे कुछ भी सदेह रहा हो। किन्तु आज हमारी दृष्टि मे ये विश्वसनीय नही माने जा सकते। 'वसन्त और शरद् विवरण' नामक ग्रन्थ (७२२-४८१ ई० पू०)—जो कनफ्यूशियस की एक-मात्र रचना मानी जाती है—की प्रामाणिकता के आधार पर यह स्पष्ट होना चाहिए कि लाओ-त्स की रचना, जो मूलत 'लाओ-त्स' नाम से ही कही जाती थी, किसी ऐसे व्यक्ति की रचना थी जिसका कुल नाम लाओ था, जिसे तान भी कहा गया है (लि नही)। यह नाम इस सूत्र को ज्ञात नही था।

कनफ्यूशियस और लाओ-त्स के भेंट होने की वात प्राचीन सूत्रो मे स्वीकार की गई है। इस सम्वन्ध मे उल्लेखनीय है कि 'लाओ-त्स' के तथा लू बू-वे के 'वसन्त और शरद्' (ई० पू० तीसरी शताब्दी का अन्त) मे कहा गया है कि लाओ-त्स कनफ्यूशियस का गुरु था। 'चुआग-त्स' (ई० पू० चौथी शताब्दी का अन्त) मे दोनो दार्शनिको के वाद-विवाद लिपिवद्ध किये गए है। लेकिन इस ग्रन्थ मे ताओ मत के अनुयायियो के साथ पक्षपा त किया जाने के कारण, ताओ और कनफ्यूशियस-

मतानुयायियो के द्वारा मान्य परस्पर विरोधी विचारो के लिए इसे एक मडनात्मक प्रवृत्तियुक्त लेख ही समझना चाहिए, अतएव इस रचना को आवश्यक रूप से विश्वसनीय नही कहा जा सकता। फिर, कनफ्यूशियस द्वारा रचित क्लासिक 'धर्मानुष्ठान ग्रन्थ' (लि-ची) की—जो ई० पू० प्रथम शताब्दी के बाद के भाग का सकलन है और जिसमे बहुत पहले की सामग्री सुरक्षित होने की सभावना है—पाँचवी पुस्तक मे चार जगह उल्लेख है कि कनफ्यूशियस ने धर्मानुष्ठानो के विषय मे लाओ-तान से जिज्ञासा की थी। इससे यह सूचित होता है कि प्राचीन काल मे कनफ्यूशियस के धर्मानुयायी भी लाओ-त्स को कनफ्यूशियस का गुरु मानते थे। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि ऐतिहासिक दृष्टि से लाओ-त्स और कनफ्यूशियस दोनो ईसा पूर्व छठी-सातवी शताब्दी के व्यक्ति थे, तथा सम्भवत लाओ-त्स कनफ्यूशियस से आयु मे बडे रहे होगे। उन दोनो के भेट करने के काल और स्थान के सम्बन्ध मे अनेकानेक प्रमाण उपस्थित करके प्राचीन विद्वानो ने जो चर्चा की है, उसके बारे मे निश्चित रूप से किसी निष्कर्ष पर पहुँच सकना कठिन है।

'लाओ-त्स' के विचारो की निश्चित अन्तर्गत वस्तु पर विचार करने से प्रतीत होता है कि वे कनफ्यूशियस तथा मो धर्मानुयायियो द्वारा प्रतिपादित 'मनीषी', 'बुद्धिमत्ता', 'परोपकार', 'धर्मपरायणता', 'बहुश्रुतत्व', 'द्वन्द्ववाद' तथा 'सुयोग्य के लिए सम्मान'-सम्बन्धी सिद्धान्तो के—जो 'वसन्त और शरद् विवरण'-काल (ई० पू० ४८१ के बाद) के बाद के दशक मे तथा विधिवादी मत (ई० पू० चौथी शताब्दी) के आरम्भ-काल मे प्रचलित थे—स्पष्टत विरोधी जान पडते है। 'लाओ-त्स' मे 'दश सहस्र रथो का स्वामी' (अध्याय २६) अथवा 'द्वितीय अधिपति' (अध्याय ३१) आदि वाक्यो का भी उल्लेख है जो 'वसन्त और शरद् विवरण'-काल के पश्चात् ही प्रयुक्त किये गए थे। इन सारी बातो से यही सिद्ध होता है कि यह ग्रन्थ कनफ्यूशियस के समकालीन 'लाओ तान' द्वारा नही, बल्कि 'युध्यमान राज्यो' (ई० पू० ४०३-२२१) के युग के समकालीन

किसी अन्य व्यक्ति द्वारा लिखा गया है। फिर भी, विद्वानो के ये मत वाह्यत कितने ही युक्तियुक्त क्यो न हो, इस प्रश्न का एक दूसरा पहलू भी है। उदाहरण के लिए 'लाओ-त्स' मे प्राय 'स्वर्ग', 'दिव्य मार्ग', 'स्वर्ग का मार्ग' आदि वाक्यो का प्रयोग है और ये प्रयोग उन्ही विचारो को व्यक्त करते है, जो पूर्ण रूप से 'वसन्त और शरद् विवरण'-काल मे (युध्यमान राज्य के काल से पूर्व) प्रतिविम्बित हुए है। इसके अतिरिक्त, 'लाओ-त्स' मे अनेक ऐतिहासिक उल्लेख पाये जाते हैं, जो धर्मानुष्ठान अथवा वृत्तान्तो से सम्वन्धित है और ये 'वसन्त और शरद् विवरण' के भाष्य 'त्सो-चुआन' मे सकलित हैं या फिर कनफ्यूशियस के क्लासिक 'धर्मानुष्ठान ग्रन्थ' (लि-ची, द्वितीय भाग, जिसे थान-कुग कहा गया है) मे उल्लिखित है। इस सम्वन्ध मे तुलना कीजिये 'ताओ-ते-चिग' के अध्याय ६२, ३१ और ६९ की।

इन उल्लेखो के अतिरिक्त लाओ-त्स ने वडे और छोटे राज्यो के सम्वन्धो का भी जिक्र किया है, और उनके वीच शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की आवश्यकता का प्रतिपादन किया है। शासन-सम्वन्धी इस प्रकार का यथार्थवादी विचार 'वसन्त और शरद् विवरण'-काल मे विविध राज्यो के पारस्परिक सम्वन्धो मे लागू हो सकता था, पर 'युध्यमान राज्यो' के काल की पापपूर्ण परिस्थितियो मे जव अनेक राज्य परस्पर युद्ध मे सलग्न थे, यह विचार कदापि नही आ सकता था। और फिर, 'मार्ग'-सम्वन्धी सर्वप्रथम दार्शनिक विचार 'लाओ-त्स' मे ही पहली वार प्रस्तुत किया गया, जव कि मालूम होता है कि उत्तरकालीन ताओ मतानुयायियो ने एक विरासत के रूप मे ही इसको विकसित किया। इस प्रकार इस नये विचार का व्याख्याता लिखता है—"इसका ठीक-ठीक नाम मैं नही जानता, लेकिन मैं इसे 'मार्ग' उपनाम से सवोधित करता हूँ और अपनी अधिक-से-अधिक योग्यता को काम मे लाकर उसके लिए शव्द खोजकर मुझे उसे 'महान्' कहना चाहिए (अध्याय २५)। 'वसन्त और शरद् विवरण-काल' मे ही हम उच्च वर्गो मे व्यक्तिवाचक नामो के सम्मान की और उपनामो की

प्रशसा करने की प्राचीन पद्धति का दर्शन करते है, जो बाद मे 'युध्यमान राज्यो' के काल मे प्रचलित प्रथा के बिलकुल विरुद्ध है—इसमे व्यक्तिगत नाम तो पाये जाते है, लेकिन उपनाम नही। और फिर 'लाओ-त्स' (अध्याय ६३-दुष्वेन्दक, अध्याय ७९) मे उल्लिखित 'अभियोगो को सदाचार मे शमन' करने का समर्थन 'दया के साथ आततायी को उत्तर देने' के विचार मे सम्बन्धित माना गया है, जिसका स्वय कनफ्यूशियस ने निषेध किया है (एनेलैक्ट्स, पुस्तक १४, अध्याय ३६)। तथा 'सत्', 'असत्' 'शून्यता', 'वास्तविकता', 'अकर्म मे कर्म', 'अक्रिया द्वारा क्रिया'-जैसे उल्लेख भी, जो 'लाओ-त्स' मे पाये जाते है, निश्चित रूप मे कनफ्यूशियस की उक्तियो-जैसे ही है—जैसे कि, 'होते हुए भी उसके पास नही है', 'पूर्ण होकर भी अपने-आपको खाली समझता है', 'अपमानित होकर भी किसी विवाद मे नही पडता' (एनेलैक्ट्स, पुस्तक ८, अध्याय ५), अथवा 'बिना प्रयास कुशलतापूर्वक शासन करने पर भी क्या 'शन' का उदाहरण नही दिया जाना चाहिए ?' (वही, पुस्तक ६, अध्याय ४)। इस प्रकार सब तरह से कुल मिलाकर यह बिलकुल स्पष्ट है कि 'लाओ-त्स' के समस्त मौलिक विचार 'वसन्त और शरद् विवरण'-काल मे प्रचलित विचारो से बहुत सगत है। इस विचार-धारा को काल के उत्तरार्ध की युध्यमान राज्यो की ही उपज समझना चाहिए।

जहाँ तक लाओ-त्स और लाओ-तान के पारस्परिक सम्बन्ध का प्रश्न है, कहा जाता है कि लाओ-तान से कनफ्यूशियस ने 'धर्मानुष्ठान ग्रथ' (लि-चि, अध्याय ५, ऊपर चतुर्थ अनुच्छेद मे उल्लिखित) के सम्बन्ध मे जिज्ञासा की थी, लेकिन छिंग राजवश के वाग चुग नाम के विद्वान् ने इसे इस आधार पर अस्वीकार किया है कि 'लाओ-त्स' मे 'परोपकारी धर्मपरायणता' और 'धर्मानुष्ठान' के विचार का विरोध है, और उसमे 'आनुष्ठानिक आचरण को भक्ति और निष्ठा का क्षीण खोल और अव्यवस्था का प्रारम्भ' के रूप मे माना है (अध्याय ३८)। कुछ भी हो, इस वक्तव्य को हम एकागी ही मानते है, क्योकि लाओ-त्स ने वस्तुत

ऐसे ही आनुष्ठानिक शिष्टाचार के रूपो का विरोध किया है जो मिथ्या और निष्ठाविहीन है, अनुष्ठान-मात्र का विरोध नही किया। 'लाओ-त्स' के सभी उल्लेख प्राचीन अनुष्ठानो के सम्बन्ध मे है, जिनका लेखक को स्पष्टत गम्भीर ज्ञान था। उसका ध्येय आत्मोन्नति द्वारा शासन के आवश्यक अर्थ की शिक्षा देना था, जिसके लिए पूर्ण निष्ठा की अपेक्षा थी और जो मनुष्य को अन्तत सरल और निष्कपट जीवन की ओर उन्मुख करती थी। इसी-को सभी प्राचीन मनीपियो ने समस्त 'अनुष्ठानो' का आधार माना था। (देखिए उदाहरणार्थ 'धर्मानुष्ठान की पुस्तक', तान-कुग की पुस्तक, भाग २, लू राज्य के ड्यूक को एई चोउ-फेंग का उत्तर)। अतएव इस ऊपरी-अन्तर्विरोध से 'लाओत्स' मे उल्लिखित अनुष्ठान-विरोधी विचारो तथा लाओ-तान द्वारा प्रदर्शित अनुष्ठानो के गम्भीर ज्ञान—दोनो मे एक ही भावना देखी जा सकती है।

'लाओ-त्स' का ग्रथ सफलता और असफलता, पालन और ध्वम, सुख तथा दु ख, लाभ और हानि के ऐतिहासिक द्वन्द्ववाद से भरा पडा है। इस परिवर्तन को अच्छाई की दिशा मे परिचालित करने और बुराई से निवृत्त करने के लिए ही लेखक ने सामान्य लोगो और विशेपकर राजाओ और कुलीन पुरुपो को—विनम्र और सयमी होने तथा मिथ्या-भिमान और निर्दयता के परिहार करने का उपदेश दिया है, जिससे 'वसन्त और शरद् विवरण'-कालीन तथाकथित 'श्रेष्ठ गुण-सम्पन्न सज्जन पुरुप' अनुष्ठानो की शिक्षाओ पर विशेप ध्यान देते हुए, व्यक्तिगत सदाचार के लिए प्रोत्साहित हो। कनफ्यूशियस की धर्मानुष्ठान-सम्बन्धी (पुस्तक १) पुस्तक मे यही विचार व्यक्त किया गया है। इसमे कहा है—"स्वय को विनम्र बनाने और दूसरो को सम्मान प्रदान करने मे ही औचित्य की परख होती है।" और 'त्सो-चुआन' मे भी, जिसमे 'वसन्त और शरद् विवरण'-काल के इतिहास और विशिष्ट व्यक्तियो का वर्णन है, शिष्टाचार के अपरिहार्य उपदेशो को अत्यन्त महत्त्व दिया गया है। इस प्रकार इसमे जिस चारित्रिक सरलता एव विनम्रता का प्रतिपादन किया गया है, वह लाओ-त्स अथवा

लाओ-तान द्वारा उल्लिखित विचारो के साथ सम्पूर्णतया मेल खाती है। हम यह भी कह सकते हैं कि 'लाओ-त्स' मे उठाए हुए प्रश्न वस्तुत 'वसन्त और शरद् विवरण'-काल के पश्चात् उद्भूत, विभिन्न मत-मतान्तरो का खडन करने के लिए 'युध्यमान' राज्यो के उत्तरकालीन किसी व्यक्ति द्वारा प्रक्षिप्त किये हुए समझने चाहिएँ।

प्राचीन चीन मे बहुत समय तक, सभी दार्शनिक विचारो का आदान-प्रदान गुरु-शिष्य-परम्परा द्वारा मौलिक रूप से ही हुआ करता था, ऐसा जान पडता है। आगे चलकर, बहुत बाद मे, इन विचारो को लिपिबद्ध अथवा सकलित किया जाता रहा। इस पद्धति की वजह से ग्रथ के मूल वचन या वक्तव्य मे बाद की अनेक पीढियो के विचारो द्वारा उसका परिवर्द्धन, परिवर्जन, परिवर्तन तथा प्रक्षिप्त भागो का जुड जाना अनिवार्य था। 'लाओ-त्स' इस प्रक्रिया का अपवाद नही हो सकता। सम्पूर्ण ग्रथ मे ५००० से कुछ अधिक ही शब्द होगे। इसकी शैली गठी हुई है और इसी-मे अनेक तुकान्त वाक्यो के साथ बहुत से प्राचीन प्रचलित वाक्यास उद्धृत है। मूलत दो भागो मे विभक्त यह ग्रथ ई० पू० की दूसरी शताब्दी के आस-पास लाओ-त्स के 'ताओ-ते-चिंग' के रूप मे प्रसिद्ध हुआ। उन्ही दिनो यह ८१ अध्यायो मे विभक्त हुआ (इसके पूर्व सम्भवत इसमे ७२ ही अध्याय थे)। पहली शताब्दी के अन्त तक 'लाओ-त्स' एक क्लासिक के रूप मे मान्य हो चुका था। इस परिचर्चा मे यह ज्ञात हो गया होगा कि 'लाओ-त्स' मे दो विभिन्न विचार-सामग्रियां मौजूद हैं—एक का सम्बन्ध 'वसन्त और शरद् विवरण'-काल से है और दूसरी का 'युध्यमान राज्यो' के काल से। यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता कि इस पुस्तक का लेखक या सकलनकर्ता कौन है। यद्यपि कुछ लोगो का कहना है कि यह 'युध्यमान राज्यो' के काल मे छ्र राज्य के किसी हुआन-युआन की रचना है। किन्तु यह एक अटकल ही है, क्योकि इसका कोई सतोषजनक लिखित प्रमाण नही है, जिसके आधार पर कोई विश्वसनीय वैज्ञानिक निष्कर्ष निकाला जा सके। फिर भी, इस सम्पूर्ण पुस्तक मे कुल मिलाकर एक

केन्द्रीय विचार और विचार की एक पूर्ण पद्धति प्रस्तुत की गई है । अत. अब हमे आलोच्य ग्रथ की निश्चित विषय-वस्तु की ओर ध्यान देना चाहिए तथा दूसरे क्लासिक मे उपलब्ध सामग्री के साथ तुलना करते हुए नेति-वाचक प्रमाणो के सहारे आन्तरिक समीक्षा के माध्यम से, इस रचना का काल निश्चित करने का प्रयत्न करना चाहिए ।

इस सम्बन्ध मे निम्नलिखित तीन बातें ध्यान देने योग्य हैं—

(क) पहली बात—'लुन-यू' मे कनफ्यूशियस ने कहा—"स्वभाव से मनुष्य एक-जैसे होते हैं, अभ्यास से वे अलग-अलग हो जाते है ।" (पुस्तक १७, अध्याय २), और त्स-कुग ने दु ख पूर्वक कहा है—"मानव-प्रकृति और स्वर्ग के मार्ग के विषय मे उसके प्रवचन श्रव्य नही ।" (पुस्तक ५, अध्याय १२) । 'चुआग-त्स' मे 'नैसर्गिक स्वभाव' के सम्बन्ध मे अनेक उल्लेख हैं । मनसिअस तथा मि त्स-छिएन, छि ताओ-खाइ, शि-शुओ, कुग सुंन, नि-त्स आदि कनफ्यूशियसवादी अनेक विचारक कभी-न-कभी "मानव-प्रकृति' के प्रश्न की चर्चा करते दिखाई देते है, तथा 'धर्मानुष्ठान ग्रथ' (पुस्तक २८) मे भी 'स्वर्ग' और 'प्रकृति' के सम्बन्ध का उल्लेख है । फिर भी, 'लाओ-त्स' ग्रथ इस विचार के प्रभाव से सर्वथा मुक्त है, यहाँ तक कि इसमे न तो नैसर्गिक स्वभाव का कथन है और न 'प्रकृति' शब्द का ही कँही एक बार उल्लेख मिलता है ।

(ख) दूसरी बात—'कुआग-त्स' के उन भागो मे, जो 'युध्यमान राज्यो' के काल मे लिखे हुए जान पडते है, हम विभिन्न विचार-धाराओ को मिल-जुलकर ताओवादी विचार-धारा की एक नई पद्धति मे परिणत होते देखते है । इसमे ताओ मत के 'मार्ग और इसका गुण' और 'क्रिया-शून्यता' कनफ्यूशियस-मतानुयायियो का 'प्रेम और धर्मपरायणता' और 'औचित्य' यहाँ तक कि विधिवादियो के कुछ सिद्धान्तो का भी उल्लेख है। इसी काल के शेन यू-हाइ ने भी विधिवादियो की विचार-धारा को 'ताओवादियो' की विचार-धारा के साथ मिला दिया है और उसने 'सम्राट् के कर्त्तव्य' और 'राजनीतिज्ञो के कर्तव्य' का उल्लेख किया है। ये वे

समस्याएँ हैं जो 'युध्यमान राज्यो' के काल के मध्य मे ही उठी थी। फिर भी 'लओ-त्स' की पुस्तको मे, जो कनफ्यूशियस तथा उनके भी पहले युग के मोहवादियो तथा विधिवादियो के सिद्धान्तो के विरुद्ध हैं, पुरातन भावना अविकृत रूप मे सुरक्षित है, इसका सम्राट् और राजनीतिज्ञ के सम्बन्ध आदि मिश्रित विचारो से रच-मात्र भी सम्बन्ध नही।

(ग) तीसरी बात—यह कहना सम्भव नही है कि 'लाओ-त्स' की पुस्तक मे उल्लिखित विचार 'चुआग-त्स' की पुस्तक के ढग पर निर्मित और विकसित किये गए होगे। 'लाओ-त्स' मे स्वर्ग और मनुष्य की मौलिक एकता पर बहुत जोर दिया गया है। इसमे स्वर्ग और पृथ्वी के समस्त प्राणियो को प्रभावित करने वाले परिवर्तनो के मध्य अपरिवर्तनशीलो की बात कही गई है, जबकि 'चुआग-त्स' मे स्वर्ग और मनुष्य की तुलनात्मक स्थितियो पर जोर दिया गया है, और यहाँ अपरिवर्तनशीलो का विरोध है। इसमे 'अपरिवर्तनशीलो' के बिना परिवर्तनो का उपदेश दिया है, तथा दूसरी समस्याओ के साथ-साथ 'स्वर्ग', 'मनुष्य', 'मार्ग', 'गुण', 'शून्यता', 'शाश्वत', 'असत्', 'सार', 'जीवन-शक्ति' आदि का उल्लेख है। ये सब विचार लाओ-त्स मे उल्लिखित विचारो से ही लिये गए हैं अथवा वहाँ से लेकर उन्हे विकसित किया गया है। वस्तुत 'चुआग-त्स' (अध्याय ३३) मे कुआन-यिन और लाओ-तान के सिद्धान्तो का प्रशसात्मक रूप मे अनुकरण किया गया है, और उन्हे प्राचीन काल के 'महत्तम और सच्चे पुरुषो' के रूप मे माना है।

(क) उपर्युक्त तीनो बातो को 'लाओ-त्स' की रचना से सम्बन्धित नेतिवाचक प्रमाणो के रूप मे उपस्थित किया गया है। इनसे जान पडता है कि यह ग्रन्थ बहुत बाद मे पुस्तक के रूप मे सकलित नही किया गया होगा। पहले (देखिए पृष्ठ ७ का नया अनुच्छेद) हम 'लाओ-त्स की विषय-वस्तु पर आधारित कतिपय निश्चित प्रमाण उपस्थित कर चुके हैं, जिनसे पता लगता है कि इसमे उपर्युक्त तीनो बातो के विरोधी विचार व्यक्त किये गए हैं, अतएव जान पडता है कि इस ग्रन्थ की रचना बहुत पहले भी

नही हुई। अव यदि हम इन दोनो प्रकार के प्रमाणो को मिला दें, तो हम अनुमान कर सकते है कि 'लाओ-त्स' का रचना-काल 'युध्यमान राज्यों' के आरम्भिक काल से मध्यकाल तक, अर्थात् ई० पू० ३९२-३५६ के वीच, सम्भवत माओ-त्स की मृत्यु के उपरान्त, लि-लि, वू-छि और शाग-याग द्वारा विधिवाद का समर्थन किये जाने के पश्चात्, तथा छि राज्य के राजकुमार वेई द्वारा चि-शिया मे अकादेमी की स्थापना के समय माना जाना चाहिए। उक्त अकादेमी ने परस्पर विरोधी विभिन्न मत-मतातरो के एकीकरण का समर्थन किया था। 'लाओ-त्स' के सकलन ने ही लाओ-वादियो के विचारो के विकास को प्रोत्साहित किया होगा, न कि इसके विपरीत। इस समय-निर्धारण से इस वात का भी सतोपजनक उत्तर मिल जाता है कि कनफ्यूशियसवादियो के 'परोपकारी धर्मपरायणता', मो मतानुयायियो के 'योग्य का सम्मान' तथा विधिवादियो के सिद्धान्तो का 'लाओ-त्स' मे एक ही साथ, उनके विचारो को विना मिश्रित किये हुए, विरोध क्यो किया गया है। जहाँ तक चुआँग-त्स का प्रश्न है, वह सम्भवत ई० पू० ३६०-३०० के लगभग, स्पष्टत 'लाओ-त्स' के सकलन के पश्चात् ही वर्तमान था।

उपर्युक्त सारे विवेचन के उपसहार के रूप मे इस निष्कर्प पर पहुँचना असगत न होगा कि सर्वप्रथम लाओ-तान ने—जो पहले इतिहास-कार था और वाद मे सन्यासी हो गया—ई० पू० छठी और पाँचवी शताब्दी के वीच 'लाओ-त्स' के मूल विचारो को प्राप्त और व्यक्त किया, तथा ई० पू० चौथी शताब्दी के मध्य मे इस ग्रन्थ को इसका वर्तमान रूप और आकार प्राप्त हुआ।

अव हम सक्षेप मे 'लाओ-त्स' मे उल्लिखित दार्शनिक विचारो की चर्चा करेंगे। सवसे पहले उसमे 'मार्ग' के विचार को लिया है। लाओ-त्स ने पालन के निश्चित नियम के अनुकरण पर, नैसर्गिक जगत् और मानव के कार्य-कलाप मे परिवर्तनो को स्वीकार किया है, यदि इन्हे स्वीकार न किया जाय तो ध्वसक स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस आन्तरिक

नियम को 'मार्ग' कहते हैं। इसका एक वास्तविक स्वतन्त्र अस्तित्व है। इसमे एक विश्व-व्यापी अवरोधहीन गति है। देवता या स्वर्ग के अस्तित्व के पूर्व ही 'मार्ग' का आगमन हुआ। यह वास्तविक भाववाद-जैसा प्रतीत होता है, लेकिन लाओ-त्स ने कहा है, मनुष्य पृथ्वी के अनुकरण पर अपना रूप बनाता है, पृथ्वी 'स्वर्ग' पर अपना रूप बनाती है, स्वर्ग 'मार्ग' पर अपना रूप बनाता है, और 'मार्ग' 'स्वत स्फूर्त' से। यहाँ तात्पर्य है कि वास्तविक जगत् मनुष्य की इच्छानुसार परिवर्तित नही होता। इस प्रकार 'मार्ग' वास्तविक जगत् के परिवर्तनो को प्रतिबिंबित करता हुआ दिखाई देता है, अतएव इसे भौतिकवादी धारणा माना जा सकता है।

दूसरा विचार पुण्य-सम्बन्धी है। लाओ-त्स ने स्वीकार किया है कि यदि मनुष्य वस्तुओ के समस्त परिवर्तनो से छुटकारा पाने की शक्ति प्राप्त करने के लिए 'मार्ग' का नियन्त्रण करना चाहता है तो उसे आवश्यक रूप से 'गुण' को ग्रहण करना चाहिए—पुण्य अर्थात् आत्मानुशीलन। 'मार्ग' पुण्य के अनुशीलन का मार्ग-दर्शन करता है, लेकिन फिर पुण्य के अभाव का अर्थ है 'मार्ग' को ग्रहण करने की असामर्थ्य। वस्तुत मनुष्य 'पुण्य' के अनुशीलन के माध्यम से भी 'मार्ग' पर पहुँच सकता है। पुण्य के अनुशीलन का तात्पर्य है मुख्यतया कम स्वार्थी होना, कम इच्छाएँ रखना, शान्त और निष्क्रिय रहना, तथा इसके सिवाय ज्ञान की खोज मे दुनिया मे बहुत दूर नही जाना। 'मार्ग' और 'पुण्य'की यह अभिन्नता तथा ज्ञान-प्राप्ति की खोज मे बाहर जाने का प्रतिरोध इनसे लाओ-त्स के दर्शन मे रहस्यवादी आदर्श-वाद का भाव आ गया है। वास्तव मे लाओ-त्स ने 'मार्ग' के अस्तित्व को जीवन-शक्ति के श्वास और उच्छ्वासयुक्त एक प्रकार के आत्मानुशीलन के साथ मिला दिया है। उसने 'कोमलता उत्पन्न करने वाली बलवती जीवन-शक्ति' (अध्याय १०) के अनुशीलन करने की कला का प्रतिपादन किया है। और फिर भी 'जीवन-शक्ति' के रूप मे 'मार्ग' की व्याख्या करना, जैसा कि कुछ लोग करते हैं और लाओ-त्स के दार्शनिक विचारो को भौतिकवादी विचार मानना सम्भव नही है, क्योकि 'मार्ग, जो वास्तव मे मार्ग माना जा

सकता है शाश्वत मार्ग से भिन्न है' (अध्याय १)। 'जीवन-शक्ति' का निश्चय ही इस रूप मे वर्णन नही किया जा सकता।

यह स्पष्ट जान पडता है कि लाओ-त्स का ज्ञान की उत्पत्ति-सम्वन्धी दर्शन सूक्ष्म विचार और स्थूल सवेदन के द्वन्द्ववाद मे वैज्ञानिक दृष्टि से भेद करने मे, तथा इन दोनो के अन्दर उनके पारस्परिक विरोध और सम्वन्ध का प्रभाव सन्निहित करने मे असमर्थ था।

कुछ भी हो, लाओ-त्स 'सत्' और 'असत्' के सम्बन्ध का पर्यवेक्षण करने के वाद ही कतिपय द्वन्द्वात्मक पद्धतियो पर पहुँचा है। 'असत्' की व्याख्या स्वर्ग और मर्त्य की आदिमता के रूप मे, तथा 'सत्' की व्याख्या समस्त प्राणियो के आधार के रूप मे की गई है। और इन दोनो आधारो पर मनुष्यो को 'मार्ग' के अन्तिम परिणाम और सूक्ष्मताओ का अन्वेषण करना है। इस प्रकार उसने कहा (१) "सत् और असत् एक-दूसरे को उत्पन्न करते है" (अध्याय २) (२) "अतएव जो है उसका लाभ उठाते हुए हम जो नही है उसकी उपयोगिता को पहचानते हैं" (अध्याय ११)। इसका अर्थ है आवश्यक रूप से 'सत्' और 'असत्' की एक-दूसरे पर निर्भरता, जो व्यावहारिक साक्षात्कार की ओर ले जाती है। (३) "मार्ग की गति का स्वरूप और 'मार्ग' की पद्धति का स्वरूप निर्वलता है" (अध्याय ४०)। इसका अर्थ है कि विरोधी पक्ष से 'मार्ग' की विकासवादी गति का प्रति-वाद की दिशा से, तथा मनुष्य के कृत्यो की कोमलता के आधार पर 'मार्ग' को व्यावहारिक क्रिया का अन्वेपण करना चाहिए। लाओ-त्स ने इन द्वन्द्वात्मक विचारो का सामान्यतया समाज, शासन और मानवीय व्यापारो पर व्यापक रूप से प्रयोग किया तथा उसने तथाकथित 'मार्ग'-सम्वन्धी द्वन्द्वात्मक तत्त्वो से युक्त निम्नलिखित कथन को भी विस्तार के साथ प्रति-पादित किया, "कुछ न करने से ऐसी कोई वस्तु नही जो न की जाय" (अध्याय ४८), "कोमल कठिन को पराजित करता है और निर्वल शक्तिशाली को", (अध्याय ३६), "आकाश और पृथ्वी तथा दस सहस्र वस्तुएँ सत् से उत्पन्न हुई है, सत् असत् से उत्पन्न हुआ है" (अध्याय ४०)।

(क) अन्त मे, लाओ-त्स के तथाकथित 'मार्ग' की व्यावहारिक सार्थकता क्या है ? उसकी 'सत्' कोटि मे उन सब वस्तुओ का अन्तर्भाव है, जिनमे रूप और वर्ण है और जो हमारी इन्द्रियो द्वारा ग्राह्य है, अर्थात् यह भौतिक तत्त्व का प्रतिनिधित्व करता है जबकि 'असत्' मे उन वस्तुओ का अन्तर्भाव है, जो हमारी इन्द्रियो द्वारा ग्राह्य नही तथा जो रूप और वर्ण रहित है यानी, जिसे हम आत्मा कहते है। पीछे हमने 'लाओ-त्स' के ११, ४८ और ४० अध्यायो से उद्धरण दिये है (देखिये—पृष्ठ १६) जिनसे सिद्ध होता है कि वह 'पुण्य' के आत्मगत अनुशीलन और अन्तर्वृत्ति की इन्द्रियगोचर क्रियाओ पर जोर देना चाहता है, जिसे सगठित करने पर जीवन के व्यावहारिक भौतिक लाभो का भली प्रकार आनन्द उठाया जा सके। 'सत्' और 'असत्' नाम के दो विरोधी तत्त्वो के समागम ने 'मार्ग' की उत्पत्ति बताई गई थी, इस प्रकार आध्यात्मिक मूल तत्त्वो की ओर ही दिशा होने के कारण यह स्पष्ट है कि लाओ-त्स की आधारभूत पद्धति और उसका द्वन्द्ववादी चिन्तन आदर्शवादी था। उसका 'मार्ग' वस्तुत एक पद्धति है, जिसमे यह बताया गया है कि वस्तुगत पदार्थो का लाभ पाने के लिए न कि सामाजिक विकास के नियमो के अनुसार वस्तुगत अस्तित्व के पुनर्निर्माण के लिए—आत्मगत अन्तर्वृत्ति की विशेष कार्यप्रणालियो का किस प्रकार प्रयोग किया जाय।

(ख) इस प्रकार लाओ-त्स द्वन्द्ववाद के कुछ प्रारम्भिक विचारो तथा परस्पर विरोधी वस्तुओ की एकता के साथ सीधा सम्पर्क स्थापित कर चुका था। हमारा कर्तव्य है कि उनकी भाववादी विचार-प्रणाली के अवशेषो की आलोचना और उसके युक्तिवादी तत्त्वो को आत्मसात् करें। उसने लोकप्रिय द्वन्द्ववाद से समृद्ध अपनी उत्तम व्यावहारिक प्रज्ञा का उपयोग करते हुए कहा है—"दुर्भाग्य की टेक लगाकर सौभाग्य है, सौभाग्य मे दुर्भाग्य छिपा रहता है।" (अध्याय ५८)। फिर, "क्योकि वस्तुएँ कभी-कभी अग्रसर होती है, कभी पिछड जाती है, कभी वे धीमे-धीमे साँस लेती है, कभी वे जोर से हाँफती है, कभी सशक्त होती है, कभी

दुर्वल होती हैं, कभी उनमे रुकावट पैदा हो जाती है, कभी उनका ह्रास होता है। अतएव सत किसी वात पर वहुत ज्यादा जोर देने से वचता है; वह अमिताचार और अति से दूर रहता है" (अध्याय २९)। लाओ-त्स ने मनुष्यो को घमडी और अहकारी न होकर सयत और विनम्र होने और इस प्रकार विरोध की विपरीतता से वचने की शिक्षा दी। उसका यह अनुभव-लब्ध उपदेश मानवता के शाश्वत लाभ की वस्तु है। शुद्ध रूप से अपनी व्यक्तिगत द्रष्टगतता के कारण उसने सामाजिक असगतियो के व्यवहार से सम्भवत अपने को दूर रखा हो, अथवा किसी एक व्यक्ति या एक अल्पसख्यक वर्ग के लाभ के लिए उसका उपयोग किया हो, और इस प्रकार वह समाज की वास्तविक असगतियो का अता-पता प्राप्त करने अथवा समस्त समाज के लाभ की वात खोजने मे असमर्थ रहा हो, लेकिन यह भाववादी द्वन्द्ववाद की एक मुख्य त्रुटि है।

(ग) लाओ-त्स ने किसी देवता को जगत् का कर्ता नही माना। उसे जनसाधारण की भूख और कष्ट के साथ सहानुभूति थी। उसने अत्यधिक कर वसूल किये जाने, राजाओ की लूट-मार और दमनकारी कानूनो का विरोध किया, उसने दृढतापूर्वक युद्ध का विरोध किया और सच्चे हृदय से शान्ति के लिए कामना व्यक्त की। ये सव विचार प्रगतिशील जनभावना से समृद्ध मनोवृत्ति को सूचित करते है। फिर भी उसने भौतिक और मानसिक स्तरो मे सभ्यता के उच्च विकास का विरोध किया, और आदिमकालीन समाज की सीधी-सादी अवस्था के लौटने का स्वप्न देखा। यह उसकी विचार-धारा के पिछडे हुए और नकारात्मक पहलू को सूचित करता है। क्या ये दो विपम दिशाओ मे जाने वाली अभिव्यक्तियाँ सम्भवत लाओ-त्स के ससार से निवृत्त होकर सन्यास धारण करने के कारण वनी ?

(घ) ई० पू० छठी और पाँचवी शताब्दी के मध्य काल जव लाओ-त्स विद्यमान था, चीन दास-समाज से सामती समाज की ओर सक्रमण कर रहा था। उस समय जव वर्ग-सघर्प अधिकाधिक उग्र हो रहा था, पुराने विधि-विधान, अनुष्ठान और रीति-रिवाज शीघ्रता से नष्ट हो रहे

थे, और अभी नये समाज का निर्माण नही हो पाया था। आने वाले नये समाज मे लाओ-त्स की आस्था न होने मे वह प्राचीन समाज के विशेषाधिकारो को स्वीकार करता था। उसके निम्न लिखित वाक्य पहले (पृष्ठ १७, क) उद्धृत किये जा चुके है—"कुछ न करने मे ऐसी कोई वस्तु नही, जो न की गई हो।" (अध्याय ४८), और "अतएव जो है उसका लाभ उठाते हुए, हम जो नही है उसकी उपयोगिता को पहचानते है।" (अध्याय ११)—इस प्रकार के विचार सामान्यतया शासन और समाज-सम्बन्धी विचार-धारा की स्पष्ट अभिव्यक्तियाँ है। तदनुसार 'लाओ-त्स' मे 'सत' के प्रति अत्यन्त मान प्रदर्शित किया गया है, यह 'सन्त' वास्तव मे काल्पनिक राजा का ही प्रतिनिधि था, जो अभिजात वर्ग के विशेषाधिकारो का रक्षक था। और अन्त मे 'विद्वान्' की पदवी मे इसका मेल खाता था, जो प्राचीन काल के अभिजात वर्ग का होता था।

चीन मे बौद्ध धर्म के प्रारम्भिक प्रचार के समय लाओ-त्स के सिद्धान्तो ने मध्यस्थता का काम किया इस सीमा तक कि ई० पू० प्रथम और द्वितीय शताब्दियो मे शाक्यमुनि के सिद्धान्त प्राय लाओ-त्स के ही सिद्धान्तो के साथ गलत ढग से एकाकार करके समझे जाने लगे थे। सातवी शताब्दी मे जब शुआन-च्याग ने भारत आकर बौद्ध-धर्म का अध्ययन किया, तो उसने कामरूप के राजकुमार भास्करवर्मन् के अनुरोध पर, जो अपने राज्य मे इस धर्म का प्रचार करने का इच्छुक था—'लाओ-त्स' का सस्कृत मे अनुवाद करना स्वीकार किया। चीन और भारत के बीच इस प्रकार का सास्कृतिक आदान-प्रदान बहुत प्राचीन काल मे ही आरम्भ हो गया था, और आज पहले की अपेक्षा कही अधिक मात्रा मे इसके होने की सम्भावना है। अतएव यह चीन और भारत की जनता के लिए अत्यन्त आनन्द और सन्तोष का विषय है कि साहित्य अकादेमी की ओर से 'लाओ-त्स' की पुस्तक का आधुनिक भारतीय भाषाओ मे अनुवाद किया जा रहा है।

•
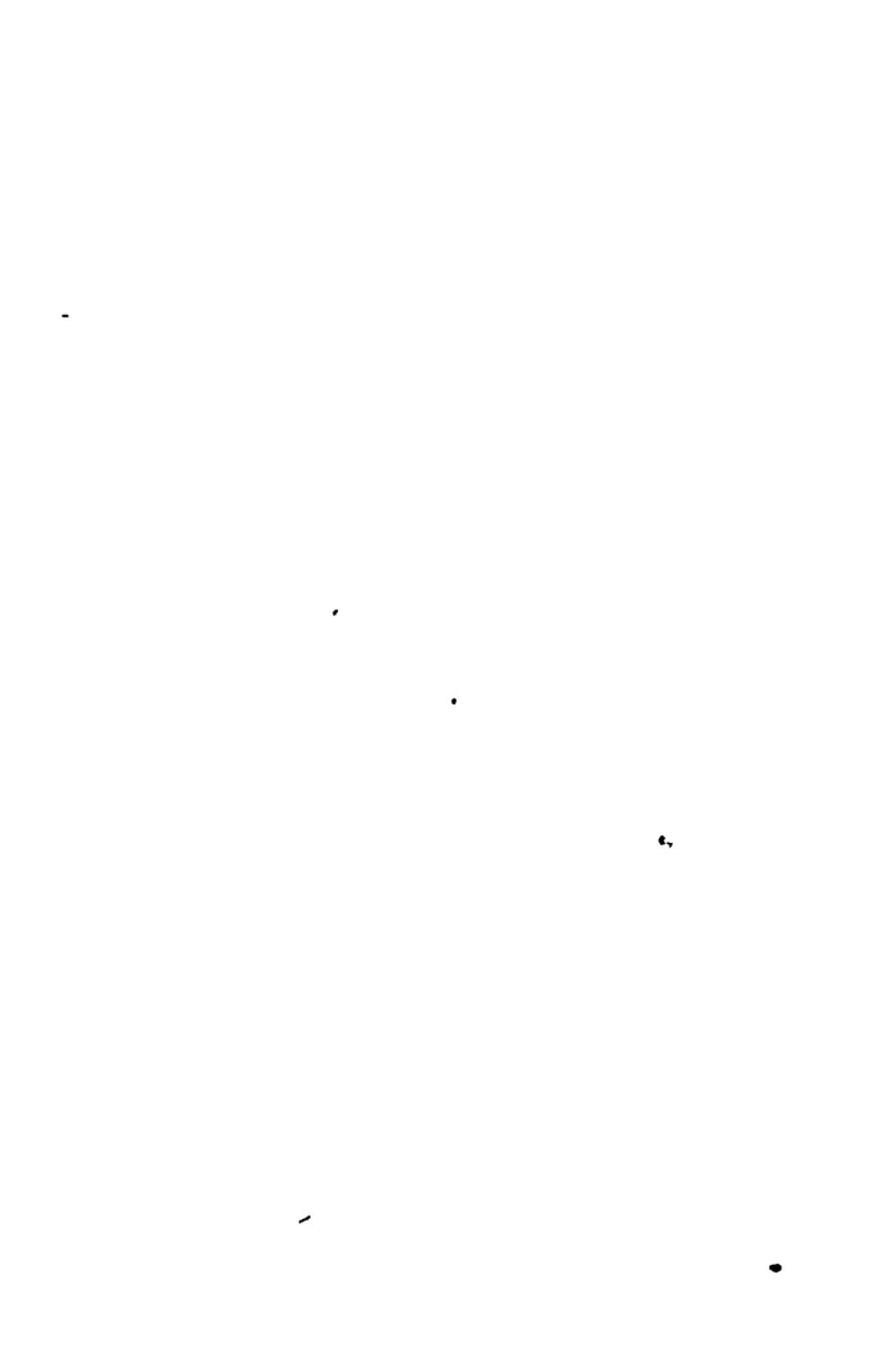
पहली पुस्तक

१

वह मार्ग, जो वस्तुतः मार्ग माना जा सकता है, शाश्वत मार्गसे भिन्न है।

वह नाम, जो वस्तुतः नाम माना जा सकता है शाश्वत नाम से भिन्न है।

असत् शब्द स्वर्ग और पृथ्वी के प्रारभ को निर्दिष्ट करता है, सत् शब्द दस सहस्र वस्तुओ की 'जन्मदात्री को निर्दिष्ट करता है।

क्योकि निश्चय ही असत् और सत् के मध्य सतत परिवर्तन द्वारा एक का चमत्कार और दूसरे की सीमा ज्ञात हो सकती है।

ये दोनों, जिनका मूल एक ही है, भिन्न नामो से कहे जाते हैं।

इन दोनो में जो सामान्य तत्त्व है, उसे रहस्य कहते हैं—रहस्यो का रहस्य सभी चमत्कारों का प्रवेश-द्वार।

२

प्रत्येक व्यक्ति संसार मे सौन्दर्य को सौन्दर्य ही समझता है, और इससे कुरूपता का ज्ञान हो जाता है।

प्रत्येक व्यक्ति अच्छे को अच्छा समझता है, और इससे जो अच्छा नही है उसका ज्ञान हो जाता है।

क्योकि निश्चय ही :

सत् और असत् एक-दूसरे को उत्पन्न करते हैं।
कठिन और सरल एक-दूसरे की पूर्ति करते है।
दीर्घ और लघु एक-दूसरे की अपेक्षा रखते है।
उच्च और नीच एक-दूसरे पर आश्रित है।
स्वर और ध्वनि एक-दूसरे में मिले हुए है।
प्रथम और अतिम एक-दूसरे का अनुक्रमण करते हैं।

३

सामर्थ्य की उचित प्रशसा न करना निश्चित करता है कि लोग उद्यमशील नही हैं।

वस्तुएँ, जिन्हे प्राप्त करना दुर्लभ है उन्हें मूल्यवान न समझना निश्चित करता है कि लोग लुटेरे नही होते।

जिन वस्तुओं को लोग चाह सकते है उन्हे उनको न दिखाना निश्चित करता है कि लोग अपने हृदयो मे व्याकुल नही होते।

अतएव शासन के सचालन में वह सत पुरुप लोगो के हृदयो

को रिक्त करता है और उदरों को भरता है, उनकी इच्छाओ को निर्बल करता है और उनकी अस्थियो को सबल बनाता है; इस प्रकार वह सतत रूप से निश्चित करता है कि लोग ज्ञानशून्य और इच्छा-विहीन हैं तथा जो ज्ञानसपन्न है वे सक्रिय होने का साहस नही करते। वह निष्क्रियता का अभ्यास करता है और फलतः ऐसी कोई वस्तु नही रह जाती जो सुशासित न हो :

४

वह मार्ग रिक्त पात्र के समान है जो उपयोग मे लाये जाने पर भी कभी नही भरता। यह कितना अगाध है दस सहस्त्र वस्तुओ की जननी की भाँति ! यह कितना गहरा है मानो सदैव बना रहेगा।

यह किसके द्वारा उत्पन्न हुआ, यह मुझे पता नही, यह उसका प्रतिबिम्ब है जो 'सम्राटो' के पूर्व विद्यमान था।

५

आकाश और पृथ्वी दयामय नही है, वे दस सहस्त्र वस्तुओं से (यज्ञ में काम आने वाले) भूसे के बने कुत्ते के समान व्यवहार करते है।

सत पुरुष दयाशील नही होते, लोगो से वे (यज्ञ मे काम

आने वाले) भूसे के बने कुत्तो के समान व्यवहार करते हैं।

आकाश और पृथ्वी के बीच का स्थान धौंकनी के समान है ! यह बिना क्षीण हुए रिक्त हो जाता है। इसे गति प्रदान की जाती है और यह अधिक-अधिक उत्पन्न करता है।

शब्दों का बाहुल्य शीघ्र ही क्षीण हो जाता है। मध्यम मार्ग का पालन करना ही श्रेष्ठ है।

६

"उपत्यका की आत्मा कभी नष्ट नही होती", इसका अभिप्राय तमोमय स्त्री से है।

"तमोमय स्त्री का द्वार"; इसका अभिप्राय आकाश और पृथ्वी के मूल से है।

तन्तुमयी शाखा-प्रशाखाओ मे यह सदा विद्यमान है, इसकी क्रियाशीलता कभी वद नही होती।

७

आकाश दीर्घायु है और पृथ्वी दीर्घावधि है। आकाश और पृथ्वी दीर्घायु और दीर्घावधि है। क्योकि वे स्वय अपना प्रजनन नही करते, अतएव वे दोनो दीर्घायु और दीर्घावधि हो सकते है।

यही कारण है कि वह सत पुरुष अपने-आपको पीछे रखता

है किन्तु फिर भी वह आगे रहता है। वह अपने-आपको वाहर रखता है, फिर भी सरक्षित रहता है। क्या इसीलिए नही कि उसकी वैयक्तिक रुचि नही है कि उसकी वैयक्तिक अभिरुचि पूर्ण होती है ?

८

सर्वोत्तम गुण जल की भाँति है। जल का गुण दस सहस्त्र वस्तुओ को बिना किसी प्रयत्न के लाभान्वित करने मे है। यह (निम्नतम) स्थान मे रहता है जिससे सव लोग घृणा करते है। अतएव यह उस मार्ग के समीप आता है।

निवास-स्थान के सम्वन्ध में सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु उसकी स्थिति है। हृदय का महत्त्व उसकी गहराई से है। मानवीय सम्वन्धो का महत्त्व उनकी मानवीयता से है। वोलने का महत्त्व उसकी सद्निष्ठा से है। राज्य-सचालन की महत्त्वपूर्ण वस्तु उसकी सद्व्यवस्था है। दूसरो की सेवा मे योग्यता का महत्त्व है। कार्य का महत्त्व उसकी समयोचितता है।

निश्चय ही, क्योकि वहाँ कोई प्रयत्नशीलता नही, इसलिए व्यक्ति निर्दोष रह सकता है।

९

(किसी बर्तन को) पकड़ने और भरने की अपेक्षा रुक जाना श्रेयस्कर है।

तलवार की परीक्षा करते हुए तुम उसकी (धार के) स्पर्श का अनुभव कर सकते हो, लेकिन तुम बहुत समय तक (इसकी तीक्ष्णता का) जिम्मा नही ले सकते।

काँसे और बहुमूल्य मणि से पूर्ण भवन की कोई भी रक्षा नही कर सकता।

धन और प्रतिष्ठा से अहकार उत्पन्न होता है, इस प्रकार स्वाभाविक रूप से बुराई इनका अनुगमन करेगी।

कार्य समाप्त हो जाने के पश्चात् अपने-आपको पीछे हटा लेना, यही स्वर्ग का मार्ग है।

१०

अपनी आध्यात्मिक और शारीरिक दोनो आत्माओ द्वारा मार्ग के एक साथ सलग्न हो जाने से क्या तुम उन्हे विच्छिन्न होने से रोक सकते हो ?

अपने श्वास को केंद्रीभूत करने से जब तक तुम मृदु न बन जाओ, क्या तुम एक शिशु भी भाँति हो सकते हो ?

अपने गुप्त दर्पण को स्वच्छ करके क्या तुम उसे निष्कलक बना सकते हो ? लोगो से प्रेम करने और राज्य पर शासन करने

मे क्या तुम निष्क्रिय बन सकते हो ?

प्राकृतिक द्वारो के खोलने और बंद करने से क्या तुम एक मुर्गी की भाँति बन सकते हो ?

चारो दिशाओ मे अपनी बुद्धि द्वारा भेदन करके क्या तुम ज्ञानविहीन रह सकते हो ?

११

यद्यपि तीस आरो को एक नाभि मे जोड़ा जाय, गाड़ी की उपयोगिता जो वहाँ नही है, उसमे है।

यद्यपि मिट्टी वर्तन के साँचे मे ढाली जाय, वर्तन की उपयोगिता जो वहाँ नही है, उसमे है।

यद्यपि गृह-निर्माण के लिए दरवाजे और खिडकियाँ बनाई जायँ, घर की उपयोगिता जो वहाँ मौजूद नही है, उसमे है।

अतएव जो है उसका लाभ उठाते हुए हम, जो नही है, उसकी उपयोगिता को पहचानते है।

१२

पाँच रग मनुष्य की आँखो को अधा कर देते है।

पाँच स्वर मनुष्य के कानो को बहरा कर देते है।

पाँच रस मनुष्य की जिह्वा को स्वाद-शक्ति से विहीन कर

देते हैं।

सरपट दौड और शिकार मनुष्य के हृदय को पागल बना देते है।

वस्तुएँ जो दुष्प्राप्य हैं मनुष्य के चरित्र को झुलसा देती हैं।

यही कारण है कि वह सत पुरुष उदर के लिए चिन्तित रहता है, नेत्रो के लिए नही।

क्योकि निश्चय ही, वह एक को अस्वीकार करता है और दूसरे को पसद करता है।

१३

पक्षपात और अपयश दोनो अकुश के समान हैं, महा विपदाओं को अपने शरीर की भाँति मूल्यवान समझो।

"पक्षपात और अपयश दोनों अकुश के समान हैं।"

इसका क्या अर्थ है ?

पक्षपात ऊँचा है और अपयश नीचा; उन्हे प्राप्त करना अंकुश के समान है। असफल होना भी अकुश के समान है। "पक्षपात और अपयश दोनो अकुश के समान है।"—इसका यही अर्थ है।

"महा विपदाओ को अपने शरीर की भाँति मूल्यवान समझो।"

इसका क्या अर्थ है ?

मुझे क्यो महान् कष्ट होता है इसका कारण यही है कि मैं

शरीर धारण करता हूँ।

ज्यो ही मेरा शरीर न रहेगा ? मुझे कौन-सा कष्ट सहना पड़ेगा ?

अतएव जो कोई आकाश के नीचे है उस सब पर शासन करता है, जैसे कि वह अपने निज के शरीर को मूल्यवान समझता हो, उसी आकाश के नीचे जो कुछ है वह सब सौंपा जा सकता है। जो कोई आकाश के नीचे जो कुछ है उस सब पर शासन करता है, जैसे वह अपने निज के शरीर से प्रेम करता है, उसे आकाश के नीचे जो कुछ है वह सब सौंपा जा सकता है।

१४

एकटक देखते हुए भी उसे नही देखते, हम उसे धुंधला कहते है।

श्रवण करते हुए भी हम उसे श्रवण नहीं करते; हम उसे अश्रव्य कहते है।

टटोलते हुए भी हम उसे ग्रहण नही कर पाते, हम उसे सूक्ष्म कहते है।

ये तीन (गुण) अंतिम परीक्षण के परिचायक नही, क्योकि निश्चय ही एक-दूसरे मे मिलकर वे एक हो जाते हैं।

उसका उदय होना प्रकाशमय नही, न उसका अस्त होना अधकार है।

असख्य अकुरों में भी फूटकर जिसकी कोई परिभाषा नहीं,

वह शून्यत्व को पुनः प्राप्त होता है।

यह निराकार को आकार प्रदान करना कहा जा सकता है, शून्य से मूर्ति-निर्माण करते हुए इसे एक अस्पष्ट सादृश्य कह सकते है।

हम उससे मिलते हैं किन्तु उसका अग्रभाग नही देख पाते, उसका हम अनुमान करते हैं किन्तु उसका पृष्ठ भाग नही देखते।

यदि पुरातन के मार्ग को ग्रहण कर हम आज के अस्तित्व का निदशन करते है, हम आद्य आरभ को जान सकते है। यह कहा जा सकता है : उस मार्ग का सकेत (उसे सरल बना देना)।

१५

प्राचीन काल मे जो उस मार्ग में कुश थे वे अद्भुत सूक्ष्म बुद्धि और रहस्यपूर्ण विलक्षणता से सम्पन्न थे, इतने गूढ कि उन्हें समझ पाना असभव है। निश्चय ही उन्हे समझ पाना असम्भव है, इसलिए हम अपनी उत्तमोत्तम योग्यता द्वारा उनके बाह्य रूप के वर्णन करने का प्रयास-मात्र कर सकते हैं।

वह कितना सकोचशील है, उसकी भाँति जो जाड़े मे नदी के जल मे चलता है।

वह कितना सावधान है उसकी भाँति जो सब तरफ से अपने पड़ौसिय़ो से भयभीत रहता है।

वह कितना अल्पभाषी है उसकी भाँति जो अतिथि है!

वह कितना तरल है बर्फ की भाँति जो पिघलने ही वाला

है !

वह कितना ठोस है बिना खोदे हुए काठ की भाँति।

वह कितना मैला है पकिल जल की भाँति !

वह कितना फैला हुआ है एक घाटी की भाँति।

पक को कौन-सी चीज नीचे बैठा सकती है ? स्थिर रहने से, वह धीरे-धीरे स्वच्छ हो जायगा।

शाति को कौन स्थायी बनायगा ? गति द्वारा वह धीरे-धीरे उद्भूत होगी।

जिन्होने इस मार्ग का पालन किया था उन्होने पूर्ण होने की इच्छा नही की। सचमुच क्योकि वे पूर्ण नही थे, फिर से नवीन रूप धारण किये बिना वे क्षीण हो सके।

१६

अतिशय रिक्तता प्राप्त कर और दृढता से निवृत्ति भाव का पालन करते हुए दस सहस्र वस्तुएँ एक साथ क्रियाशील है—मैं इस प्रकार उनके (शून्यत्व मे) पुनरागमन का चिन्तन करता हूँ।

निश्चय ही जो वस्तुएँ प्रचुरता के साथ समृद्ध होती है, उनमे से प्रत्येक अपने उसी मूल को लौट जाती है (जहाँ से वह आई थी)। मूल मे लौट जाने को स्थिरता कहते है, इसे अपने विश्वास का समर्पण कहा जायगा।

अपने विश्वास का समर्पण शाश्वत (नियम) कहा जाता है। जो इस शाश्वत (नियम) को जानता है वह प्रबुद्ध कहा

जाता है। जो इस शाश्वत (नियम) को नही जानता यह मूर्खता से क्रियाशील रहता है और कष्ट पाता है। जो इस शाश्वत (नियम) को जानता है, वह सहन करना है, सहन करते हुए वह पूर्वग्रह मुक्त है, जो पूर्वग्रह मुक्त है वह सबको अपने में सम्मिलित कर लेने वाला है, जो सबको अपने मे सम्मिलित कर लेता है वह महान् है, जो महान् है वह उस मार्ग को (जानता है), जो उस मार्ग को (जान लेता है) वही टिकता है, जीवन के अन्त तक वह सकट में नही रहता।

१७

अत्यन्त पुरातन काल में किसी को यह भी मालूम न था कि राज्यकर्ता भी थे।

फिर किसी ने उनसे प्रेम किया और उनकी प्रशसा की।

फिर कोई उनसे डरने लगा।

फिर कोई उनसे घृणा करने लगा।

यदि (राजकुमार की प्रजा के प्रति) सत्य निष्ठा अपर्याप्त है, तो (प्रजा की राजकुमार के प्रति) सत्य निष्ठा आवश्यक होगी।

(राजर्षि) विचारशील थे और अपने शब्दों का मूल्य करते थे।

जब कार्य समाप्त हो गया और काम सहज गति से चलने लगा, सब लोगो ने कहा : "हमने इसे स्वयं किया है।"

१८

जब उस महान् मार्ग का ह्रास होता है, "मानवता और न्याय उत्पन्न होते हैं।"

जब कुशलता और ज्ञान दिखाई देते हैं, "महान् कृत्रिमता" उत्पन्न होती है।

जब ज्ञाति सम्बन्धी छह श्रेणियाँ सामजस्य मे नहीं रहती, "योग्य पुत्र" उत्पन्न होते है।

जब राज्य और राज्यवश अव्यवस्था मे डूब जाते है। "राजनिष्ठ मत्री" उत्पन्न होते है।

१९

सन्तोचित जीवन का उन्मूलन करो और ज्ञान को अस्वीकार कर दो : लोगो को सौ गुना लाभ होगा।

मानवता का उन्मूलन करो और न्याय को अस्वीकार कर दो : लोग पितृभक्ति और मातृप्रेम को पुनः प्राप्त करेंगे।

चतुराई का उन्मूलन करो और लाभ को अस्वीकार कर दो : चोर और लुटेरे नही रहेगे।

(कभी) ये तीनो (मात्र) जैसे शब्द न समझ लिये जायें जो अपर्याप्त हो, कोई ऐसी वस्तु हो जिसका वे आश्रय ले सकें।

स्वाभाविक सरलता को प्रकट करो और कला-शून्यता को पकड़े रहो : स्वार्थ को घटाओ और इच्छाओ को कम करो।

२०

अध्ययन का ऊन्मूलन कर दो और तुम चिन्ता से मुक्त हो जाओगे ।

" 'हाँ' और 'अं' में क्या अन्तर है," "अच्छे और बुरे में क्या अन्तर है," "जिससे दूसरे भयभीत होते हैं उससे भयभीत रहना चाहिए,"—(इन बातो का अध्ययन) कितना विस्तृत है ।

इसका कोई अन्त नही है !

किन्तु जब सब लोग आनन्दमग्न हैं मानो वे कोई महायज्ञ कर रहे हों अथवा वसत ऋतु मे खेल-कूद रहे हो, उस समय मैं अकेला इतना निष्क्रिय, किसी प्रकार का सकेत न करते हुए—एक शिशु की भाँति हूँ जिसकी मुस्कान अभी फूटी नही है, इतना परित्यक्त—उसकी भाँति जिसे कही भी मुड़ना नही है। जब सब लोगो के पास प्रचुरता है, मैं अकेला उसकी भाँति हूँ जो कि त्याग दिया गया है।

निश्चय ही मेरे एक मूर्ख का हृदय है—इतना कुठित !

साधारण लोगों को तेज़ और बुद्धिमान होने दो, एक मैं ही मूढ और भ्रात हूँ ।

साधारण लोगों को विदग्ध और दूरदर्शी होने दो, एक मैं ही मन्दबुद्धि और हीनदृष्टि हूँ ।

क्षीण होते हुए चद्रमा के समान क्षीण; भटकता हुआ उसकी भाँति जिसको कही विश्रान्ति नही !

सब मनुष्यों का कोई उद्देश्य होने दो, एक मैं ही गँवार की भाँति अज्ञ हूँ ।

एक मैं ही दूसरो से भिन्न हूँ क्योकि मैं "उस माँ" पर निर्भर होने को मूल्यवान समझता हूँ ।

२१

महान् शक्ति की बाह्य अभिव्यक्तियाँ अनन्य रूप से उस मार्ग से ही अग्रसर होती हैं ।

वह मार्ग कुछ अत्यन्त अस्पष्ट और अति सूक्ष्म है । यद्यपि वह अति सूक्ष्म और अस्पष्ट है, इसके भावचित्त प्रच्छन्न हैं । यद्यपि वह अस्पष्ट और अति सूक्ष्म है, इसकी वस्तुएँ प्रच्छन्न हैं । यद्यपि वह अभेद्य और गूढ है, इसका सार प्रच्छन्न है । यह सार अत्यन्त यथार्थ है, इसका अमोघत्व प्रच्छन्न है, जिससे पुराने समय से अब तक वह नाम ("मार्ग") सामान्य उद्गम का वर्णन करने में त्याग नही दिया गया है । इस सामान्य उद्गम की विधि मैं कैसे जानूं ? इससे ।

२२

जो मुडा हुआ है, पूर्ण हो जाता है ।
जो वक्र है, सीधा हो जाता है ।
जो खोखला है, भर जाता है ।
जो पुराना है, नया हो जाता है ।

जिसके पास थोडा-सा है, उसे प्राप्त होता है।

जिसके पास अधिक है, वह माया में पड जाता है।

अतएव संत उस एक में लगा रहता है और उसे आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबके माप के अनुरूप बनाता है।

वह अपने-आपका प्रदर्शन नही करता; अतएव वह चमकता है।

वह स्वत. आग्रह नही करता, अतएव वह प्रकट है।

वह डीग नही मारता, अतएव वह सफल होता है।

वह मिथ्याभिमान का अनुभव नही करता, अतएव वह प्रमुख बन जाता है।

निश्चय ही, केवल इसलिए कि वह प्रयास नही करता, आकाश के नीचे रहने वालों में कोई भी उसके साथ होड़ नही कर सकता।

पुरानी कहावत है: "जो मुडा हुआ है वह पूर्ण हो जाता है"—यह अवश्य ही कोरे शब्द नही हैं! इसका अर्थ है वह सब जो वास्तव में पूर्ण है।

२३

कथन में संक्षिप्त होना स्वाभाविक (क्रम) है।

क्योंकि वात्याचक्र सारे सबेरे नही रहता, न तूफान ही सारे दिन रहता है। वह कौन है जो इनकी सृष्टि करता है? आकाश और पृथ्वी। अब यदि आकाश और पृथ्वी भी (जैसे आधिक्य

को) स्थायी नही रख सकते, फिर मनुष्य तो क्या रखेगा ?

अतएव जो अपने कार्यों में मार्ग का अनुसरण करता है, उस मार्ग के साथ अपना तादात्म्य स्थापित करता है। यदि वह सफल होता है तो वह सफलता के साथ अपना तादात्म्य स्थापित करता है, यदि वह असफल होता है तो असफलता के साथ तादात्म्य स्थापित करता है।

यदि वह उस मार्ग के साथ तादात्म्य स्थापित करता है, वह मार्ग को प्राप्त करने पर आनदित होता है। यदि वह सफलता के साथ अपना तादात्म्य स्थापित करता है, वह इसी प्रकार सफलता पाने पर आनदित होता है। यदि वह असफलता के साथ तादात्म्य स्थापित करता है, वह असफलता पाने पर भी आनदित होता है।

२४

पजो के बल कोई खड़ा नही होता।
टाँगो को फैलाकर कोई आगे नही बढता।
जो अपना प्रदर्शन करता है वह चमकता नही है।
जो अपनी बात का दावा करता है वह स्पष्ट नही है।
जो डीग मारता है वह सफल नही होता।
जो मिथ्या अभिमानी है वह प्रमुख नही बनता।

उस मार्ग के सम्बन्ध मे (इस प्रकार के दृष्टिकोण से) यह कहा जा सकता है : "आवश्यकता से अधिक भोजन और

अत्यधिक कार्यों से सभी घृणा करते हैं। अतएव जिसके पास मार्ग है वह उनसे अपना सम्बन्ध नही रखता।"

२५

आकाश और पृथ्वी के निर्माण के पहले कुछ ऐसी वस्तु थी जो विलयन की अवस्था मे थी। कितना प्रशान्त और कितना रिक्त है यह, यह अकेला खडा रहता है और बदलता नही है, यह सर्वत्र व्याप्त होता है और कभी थकता नही। इसे आकाश के नीचे रहने वाले सबकी जन्मदात्री कहा जा सकता है।

इसका ठीक-ठीक नाम मैं नही जानता, किन्तु मैं इसे "मार्ग" उपनाम से बुलाता हूँ, और अपनी उत्तमोत्तम योग्यता द्वारा उसके लिए शब्द खोजकर मुझे उसे "महान्" कहना चाहिए। "महान्" का अर्थ है "आगे बढते जाना"। "आगे बढते जाना" का अर्थ है "दूर तक जाना"। "दूर तक जाना" का अर्थ है "लौटना" (विपरीत दिशा में)।

इस प्रकार, वह मार्ग महान् है, आकाश महान् है, पृथ्वी महान् है, और राजा महान् है। ससार मे चार महान् है और उसमे एक राजा है। राजा अपने-आपको पृथ्वी के अनुरूप ढालता है, पृथ्वी अपने-आपको आकाश के अनुरूप ढालती है, आकाश अपने-आपको मार्ग के अनुरूप ढालता है, और मार्ग अपने-आपको प्राकृतिक क्रम के अनुरूप ढालता है।

२६

गुरुत्व हल्केपन का मूल है, स्थिरता क्षोभ की स्वामिनी है।

इस प्रकार एक कुलीन व्यक्ति अपने सामान की गाडी को विना छोडे हुए सारे दिन यात्रा करता है। यद्यपि (उसके चारो ओर) शिविर और पहरे की चौकियाँ हो सकती हैं, वह निर्विघ्न और शान्त बैठा रहता है।

फिर दस सहस्र रथो के स्वामी को आकाश के नीचे रहने वाला जो कुछ है उसके सबके सबध मे स्वय कैसे अगभीरता से अग्रसर होना चाहिए ?

यदि वह स्वय अगंभीरता से अग्रसर होता है, वह मूल को खो देगा, यदि वह क्षुब्ध होता है, वह स्वामित्व खो बैठेगा।

२७

एक निपुण यात्री के लिए न पथ है, और न पथ-चिह्न।

एक निपुण वक्ता के लिए न निन्दा है, न प्रशसा।

एक निपुण गणक अंकयष्टि का उपयोग नहीं करता।

एक निपुण दरवाजा वन्द करने वाला न साकल लगाता है, न कुडी, फिर भी (जो वन्द किया है) उसे खोलना असभव होगा।

एक निपुण जिल्दसाज न डोरी लगाता है और न गाँठ

बाँधता है, फिर भी (जो उसने बाँधा है) उसे खोलना असभव होगा।

इस प्रकार वह संत मनुष्यो की रक्षा करने में निरंतर कुशल रहता है, क्योंकि वह मनुष्यो को बिना अस्वीकृत किये कार्य करता है। जो अच्छा नही है उसमें भी ऐसा कौन है जो अस्वीकृत होगा।

वह वस्तुओ की रक्षा करने में निरतर कुशल रहता है; क्योंकि वह वस्तुओं को बिना अस्वीकृत किये कार्य करता है। यह दुहरी समझ कही जाती है। क्योंकि एक कुशल व्यक्ति एक अकुशल व्यक्ति का स्वामी होता है, और अकुशल लोग कुशल के लिए सामग्री है। फिर भी कोई कितना ही बुद्धिमान क्यो न हो, अपने स्वामी का मूल्य न समझना, या अपनी सामग्री किसी को न देना—यह बडी भूल है। यह मुख्य आश्चर्य कहा जाता है।

२८

जो पुरुषत्व के प्रति चेतन है, फिर भी नारीत्व के अनुकूल है, वह आकाश के नीचे जो कुछ है उसके सबके लिए दर्रा कहा जायगा। क्योकि वह आकाश के नीचे जो कुछ है उसके सबके लिए यह दर्रा है, शाश्वत गुण ("शक्ति") निःसृत नही होगा। वह शैशव अवस्था को पुन. प्राप्त होता है।

जो श्वेत के प्रति चेतन है, फिर भी कालिमा के अनुकूल है, वह आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबका नाप है। क्योकि वह

आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबका माप है, शाश्वत गुण ("शक्ति") उसकी उपेक्षा नही करेगा। वह उस दशा को पुन. प्राप्त करता है जिसके छोर नही है।

जो गौरवशाली के प्रति चेतन है, फिर भी गौरवहीनता के अनुकूल है, वह आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबके लिए घाटी है, शाश्वत गुण ("शक्ति") पर्याप्त होगा। वह अनुत्कीर्ण काष्ठ की अवस्था को पुन प्राप्त होता है।

अनुत्कीर्ण काष्ठ जो (खडित और) विकीर्ण है उससे (बहुत से) बर्तन बनते है, किन्तु सत, इसका उपयोग करके मुख्य अनुष्ठाता बन जाता है।

क्योकि उत्तम खुदाई काट देने भर से नही होती।

—

२९

जो अपने कार्य द्वारा आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबको अपने हस्तगत कर लेगे—मैंने देखा है वे किस दुर्दशा को प्राप्त होते हैं !

आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबके आध्यात्मिक पात्र की रचना नही की जा सकती। जो उसकी रचना करता है वह उसे बिगाड़ता है, जो उसे धारण करता है उसे खो देता है।

अतएव सत कुछ भी नही करता और इसलिए कुछ भी नही बिगाड़ता; वह कुछ भी धारण नही करता और इसलिए कुछ भी नही खोता।

क्योकि वस्तुएँ कभी अग्रसर होती हैं, कभी पिछड़ जाती हैं; कभी वे धीमे-धीमे श्वास लेती है, कभी वे जोर से हाँफती हैं, कभी वे सशक्त होती है, कभी वे दुर्बल होती है, कभी वे पुनः आरभ होती है. कभी उनका अन्त होने लगता है।

अतएव सन्त अत्यधिक जोर देने से दूर रहता है, वह अपव्यय से दूर रहता है, वह अति से दूर रहता है।

३०

जो उस मार्ग के साथ सामजस्य रखता है वह मनुष्यो के स्वामी को सहायक होगा, आकाश के नीचे जो कुछ है उस सब पर शस्त्रबल से दबाव न डालेगा। ऐसी वस्तुएँ प्रतिनिवृत्त हो सकती है।

जहाँ कहीं सेनाएँ तैनात रहती हैं वहाँ जगली गुलाब और काँटे पैदा होते हैं।

बड़े आन्दोलनो के उठने पर बुरे दिनो का आना अवश्यंभावी है।

एक निपुण (सेनापति) दृढ है, यही सब-कुछ है। वह (साम्राज्य) पर अधिकार करने मे हिंसा का उपयोग करने का साहस नही कर सकता। उसे दृढ होने दो, लेकिन वह आत्म-शलाघी न हो, उसे दृढ होने दो, किन्तु वह गर्वीला न हो, उसे दृढ होने दो, किन्तु वह अभिमानी न हो। उसे दृढ होने दो, क्योकि उसकी कोई पसद नही है। उसे दृढ होने दो, किन्तु वह

हिंसा का उपयोग न करे।

३१

निश्चय ही, इसलिए कि शस्त्र बुराई के साधन हैं जो सदा ही सब प्राणियों द्वारा घृणापूर्वक देखे जाते है, जिसके पास वह मार्ग है उनसे उसका कोई संबंध नही।

घर पर एक कुलीन व्यक्ति बाईं ओर आदर का स्थान समझता है, किन्तु जब वह शस्त्र धारण करता है, वह दाईं ओर आदर का स्थान समझने लगता है।

शस्त्र बुराई के साधन हैं और वे एक कुलीन व्यक्ति के लिए उचित साधन नही है। केवल बाध्य होकर वह उन्हे धारण करता है, तथा शाति और निर्द्वन्द्वता को वह सबसे अधिक महत्त्व देता है। वह विजयी होता है फिर भी उसे उसमे कोई सौंदर्य दिखाई नही देता। यदि उसे इसमे सौंदर्य दिखाई दे तो उसे मनुष्यो की हत्या मे आनन्द प्राप्त होगा। जो मनुष्यो की हत्या मे आनन्द प्राप्त करता है वह आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबमे अपनी इच्छा को कभी नही प्राप्त करेगा।

आनन्द के अवसरो पर बाईं ओर को गौरव का स्थान माना जाता है; शोक के अवसरो पर दाईं ओर को महत्त्व दिया जाता है। उप-सेनापति को बाईं ओर नियुक्त किया जाता है, सेनापति को दाईं ओर—इसका अर्थ यह हुआ कि शोक की रीतियो के अनुसार उन्हे नियुक्त किया जाता है। बहुसंख्यक मनुष्यो की

हृत्या का, दुःख और विजय के साथ शोक मनाया जाता है। अतएव युद्ध मे विजय प्राप्त होने पर उन्हे शोक की रीतियो के अनुसार स्थापित किया जाता है।

३२

उस मार्ग मे नाम-हीनता की सरलता है। ज्यों ही उसमें खुदाई की जाती है, इसमे नाम वन जाते हैं।

क्योकि नामो का भी अस्तित्व है, संत जान सकेगा कि कहाँ मानना चाहिए। जो जानता है कि कहाँ मानना चाहिए वह संकट से दूर रह सकता है। आकाश के नीचे जो कुछ है उस सवके और मार्ग के संवध की तुलना प्रचंड प्रवाहो से और घाटियो की सरिता और सागर के साथ की जा सकती है।

३३

जो दूसरों को जानता है वह जानकार है, जो अपने-आपको जानता है वह प्रवुद्ध है।

जो दूसरो पर विजय प्राप्त करता है उसमें शक्ति है, जो अपने-आप पर विजय प्राप्त करता है वह बलवान है।

जो वलपूर्वक कार्य करता है उसमे दृढ़ता है; जो संतोष को समझता है वह धनी है।

जो अपने निर्दिष्ट स्थान से गमन नही करता, वही कायम रहेगा। जो विना नष्ट हुए मर जाता है वह दीर्घजीवी होगा।

३४

वह महान् मार्ग कितना द्विविधापूर्ण है ! यह बाईं या दाईं ओर कही भी जा सकता है।

दस सहस्र वस्तुएँ अपने अस्तित्व के लिए इस पर निर्भर रहती है, यह उन्हे मना नही करता।

जब कोई कार्य समाप्त हो जाता है, यह हम पर अधिकार नही कर लेता।

यह दस सहस्र वस्तुओ की रक्षा करता है और उनका पालन करता है, किन्तु यह उनके स्वामी के रूप में आचरण नही करता।

लघुत्तम वस्तुओं के साथ इसका नाम लिया जा सकता है।

दस सहस्र वस्तुएँ इससे प्रत्यावर्तित होती है, लेकिन वह उनके स्वामी के रूप में आचरण नही करता।

महत्तम वस्तुओ के साथ इसका नाम लिया जा सकता है।

क्योकि यह अपनी महत्ता को निश्चित रूप से नहीं कहता, अतएव यह अपनी उचित महत्ता को प्राप्त करने के लिए समर्थ है।

३५

जो महान् प्रतिभा को धारण करता है उसमें आकाश के नीचे जो कुछ है वह सब आश्रय लेगा।

जो कोई उसका आश्रय लेंगे उन्हें कोई हानि न होगी, बल्कि वे (आकाश और पृथ्वी के साथ) शांति और ऐक्य से रहेंगे।

संगीत और सुस्वादु भोजन जाते हुए अजनबी के पदो को रोक देंगे।

किन्तु जो शब्द उस मार्ग के विषय में कहे जाते हैं वे कितने स्वादहीन और गंधहीन हैं।

देखने पर यह देखने योग्य नहीं हैं।

सुनने पर यह सुनने योग्य नही है।

उपयोग करने पर भी वह क्षीण नही हो सकता।

३६

यदि तुम सिकुड़ना चाहते हो तो पहले तुम्हे फैलना चाहिए।

यदि तुम निर्बल होना चाहते हो तो पहले तुम्हें शक्तिशाली होना चाहिए।

यदि तुम नष्ट होना चाहते हो तो पहले तुम्हें उठना चाहिए।

यदि तुम पाना चाहते तो पहले तुम्हें देना चाहिए।

यह "सूक्ष्म दृष्टि" कही जाती है. कोमल कठिन को पराजित करता है और निर्बल शक्तिशाली को पराजित करता है।

मछली गहरे पानी से नही निकाली जानी चाहिए; राज्य के उपयोगी उपकरण मनुष्यो को नही दिखाये जाने चाहिएँ।

३७

वह मार्ग सतत निष्क्रिय है फिर भी ऐसी कोई चीज़ नही जो बिना किये रह जाती हो।

यदि अधीनस्थ राजा इसे स्वीकार कर सकते तो दस सहस्र वस्तुएँ अपने-आपमें से विकसित होती। यदि इस विकास मे इच्छा हलचल पैदा करे, तो मैं नामहीन (स्वाभाविक) सरलता द्वारा उसका दमन करूँगा।

भले ही (स्वाभाविक) सरलता नगण्य हो, फिर भी आकाश के नीचे जो कुछ है उस सब में से कोई भी उसे दास नही बना सकती।

यदि अधीनस्थ राजा इसे स्वीकार करें जो दस सहस्र वस्तुएँ अपने-आप ही उनके पास एकत्रित हो जायेंगी। आकाश और पृथ्वी मधुर ओसकण पहुँचाने के लिए परस्पर सयुक्त हो जायेंगे, और लोग बिना किसी आज्ञा के अनायास ही समान भाग प्राप्त करेंगे।

सचमुच ही वे इच्छाविहीन हो जायेंगे। इच्छाविहीन होकर वे शात हो जायेंगे, तथा आकाश के नीचे जो कुछ है वह सब स्वय ही स्थिर हो जायगा।

दूसरी पुस्तक

३८

श्रेष्ठ गुण अपने गुण का कभी दावा नही करता, इसलिए उसमें गुण है।

निम्न गुण अपने गुण का कभी भी परित्याग नही करता; इसलिए उसमें गुण नही है।

श्रेष्ठ गुण न तो सक्रिय होता है, न उसका कोई उद्देश्य है।

निम्न गुण सक्रिय होता है और उसका कोई उद्देश्य रहता है।

श्रेष्ठ मानवता सक्रिय रहती है किन्तु उसका कोई उद्देश्य नही रहता।

श्रेष्ठ न्याय सक्रिय होता है और उसका कोई उद्देश्य रहता है।

श्रेष्ठ विधिवत् आचरण करने वाला (व्यक्ति) सक्रिय होता है, और कोई उत्तर न पाने पर वह अपनी बाँहों को चढ़ाता है

और आक्रमणशील बन जाता है।

इस प्रकार जब एक बार वह मार्ग त्याग दिया जाता है, तत्पश्चात् गुण का दावा किया जाता है, जब एक बार गुण त्याग दिया जाता ह, तत्पश्चात् मानवता का दावा किया जाता है, जब एक बार मानवता को त्याग दिया जाता है, तत्पश्चात् न्याय का दावा किया जाता है, जब एक बार न्याय को त्याग दिया जाता है तब विधिपूर्ण आचरण का दावा किया जाता है।

अब विधिपूर्ण आचरण स्वामि-भक्ति तथा सद्निष्ठा का क्षीण आचरण है, तथा अव्यवस्था के प्रारम्भ का। पूर्वज्ञान उस मार्ग का एक पुष्प मात्र है और मूढता का प्रारम्भ।

अतएव "महान् वयस्क" स्थूल के बारे मे ही चिंतित रहता है, और सूक्ष्म से सम्बन्ध नही रखता, वह गूदे के लिए चिंतित रहता है और पुष्प की परवाह नही करता।

अतएव वह उसे अस्वीकार कर देता है और इसे पसन्द करता है।

३९

जो पुराने हैं और जिन्होने एकत्व प्राप्त किया है वे निम्नलिखित है :

आकाश ने एकत्व प्राप्त किया और वह स्वच्छ हो गया।

पृथ्वी ने एकत्व प्राप्त किया और वह शान्त हो गई।

आत्माओ ने एकत्व प्राप्त किया और वे अनुप्राणित हो

गईं।

घाटियों ने एकत्व प्राप्त किया और वे भर गईं।

दस सहस्र वस्तुओ ने एकत्व प्राप्त किया और वे उत्पन्न की गईं।

सामन्ती राजाओ ने एकत्व प्राप्त किया और वे आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबके सुधारक हो गए।

यह सब (एकत्व का ही) परिणाम है।

यदि इसके द्वारा आकाश स्वच्छ न होता, तो डर था कि शायद वह फट जाता।

यदि इसके द्वारा पृथ्वी शान्त न होती, तो डर था कि वह काँपने लगती।

यदि इसके द्वारा आत्माएँ अनुप्राणित न होती, तो डर था कि वे विघटित हो जाती।

यदि इसके द्वारा घाटियाँ न भरती, तो डर था कि वे सूख जाती।

यदि इसके द्वारा दस सहस्र वस्तुएँ उत्पन्न न की जाती, तो डर था कि वे लुप्त हो जाती।

यदि इसके द्वारा सामन्ती राजा कुलीन और उच्च न होते, तो डर था कि उनका पतन हो जाता।

क्योकि कलीन दरिद्र को मूल रूप मे रखता है, और उच्च का अवलम्ब नीच है।

अतएव सामन्ती राजा अपने-आपको "अनाथ," "एकाकी" और "निराश्रित" कहते है। निश्चय ही इसका कारण यह है कि कि वे दरिद्र को अपना मूल मानते है।

क्योंकि प्राप्त किया हुआ सर्वश्रेष्ठ सम्मान मान रहित होता है।

इसकी इच्छा मूल्यवान मणि की तरह उत्तम रूप से उत्कीर्ण किये जाने की नही होती, किन्तु कंकड़ो की भाँति विकीर्ण किये जाने की होती है।

४०

उस मार्ग का गति है : उलटना।

उस मार्ग की पद्धति है : निर्बल होना।

आकाश और पृथ्वी तथा दस सहस्र वस्तुएँ सत् मे से उत्पन्न हुई हैं; सत् असत् मे से उत्पन्न होता है।

४१

जब कोई सर्वोच्च श्रेणी का सभ्य पुरुष उस मार्ग के विषय में सुनता है, वह उसे व्यवहार मे लाने का पूरा-पूरा प्रयत्न करता है।

जब कोई मध्यम श्रेणी का सभ्य पुरुष उस मार्ग के विषय में सुनता है, वह कभी उसे धारण करता हुआ और कभी खोता हुआ मालूम होता है।

जब कोई निम्न श्रेणी का सभ्य पुरुष उस मार्ग के विषय मे

सुनता है, वह उसका बड़े जोर से परिहास करता है।

यदि उसका परिहास न किया जाय, तो वह, मार्ग समझे जाने के योग्य न होगा ·

क्योंकि एक प्रसिद्ध उक्ति है ·

उज्ज्वल मार्ग अधकारमय मालूम होता है।

गतिशील मार्ग प्रतिगामी मालूम होता है।

समतल मार्ग ऊबड़-खाबड मालूम होता है।

सर्वश्रेष्ठ गुण एक घाटी की भाँति मालूम होता है।

सफेद चिट्टा मैला मालूम होता है।

व्यापकतम गुण अपर्याप्त मालूम होता है।

दृढतम गुण निर्बल मालूम होता है :

सत्यतम पदार्थ त्रुटिपूर्ण मालूम होता है।

सबसे बड़े वर्ग में कोने नही होते।

सबसे बड़ा पात्र सबसे अन्त में भरा जाता है।

सबसे बड़े सगीत में सबसे विरलतम ध्वनि होती है।

सबसे बडी प्रतिमा का रूप नही होता।

वह मार्ग गुप्त है और नामो से विहीन है। निश्चय ही, क्योकि वह मार्ग प्रदान करने में समर्थ है इसलिए वह पूर्ण करने में भी समर्थ है।

४२

एक ने दो को उत्पन्न किया, दो ने तीन को उत्पन्न किया,

तीन ने दस सहस्र वस्तुओ को उत्पन्न किया।

दस सहस्र वस्तुएँ अंधकार से विमुख होती है और प्रकाश को ग्रहण करती है; शून्य का वाष्प उन्हे समन्वित रूप से मिला है।

जिससे लोग घृणा करते है वह "अनाथ" होगा, "एकाकी" होगा और "निराश्रित" होगा, फिर भी राजा और कुलीन पुरुष अपने-आपको इन नामों से पुकारते हैं।

क्योकि, वस्तुएँ कभी-कभी घटने से बढ जाती हैं, और बढने से घट जाती हैं।

जो दूसरों ने सिखाया है वही मैं भी सिखाता हूँ कि हिंसा को मानने वाले कभी अपनी स्वाभाविक मृत्यु को प्राप्त नही होगे, मैं उस सिद्धान्त का प्रवर्त्तक हूँगा।

४३

ससार को निर्बलतम वस्तु ससार की कठोरतम वस्तु से टकराती है। समस्त ससार में ऐसी कोई वस्तु नही जो जल से अधिक कोमल अथवा निर्बल हो, किन्तु कठोर और दृढ वस्तु पर आक्रमण करने मे इससे बढकर और कोई नही। बिना ठोस पदार्थ के यह वहाँ प्रवेश कर जाती है जहाँ कोई दरार नही है, अभाव के कारण वह सुगम हो जाती है।

इससे मैं जानता हूँ कि अकर्म से लाभ होता है।

शब्दहीन सिद्धान्त तथा अकर्म का लाभ इस दुनिया मे विरले

ही ग्रहण करेंगे।

अतएव सत अकर्म के अभ्यास का आचरण स्वीकार करता है तथा सिद्धात को बिना शब्दकोष के सिखाता है।

४४

नाम या व्यक्ति : कौन निकटतम है ?

व्यक्ति या सपत्ति : कौन अधिक गण्य है ?

लाभ या हानि : कौन अधिक बुरा है ?

क्योकि जितना अधिक बचाना उतना ही अधिक व्यय करना, जितना अधिक जमा करना उतना ही अधिक खाना।

वह जो सतोष को समझता है लज्जित नही होगा।

जो जानता है कि क्या स्वीकार किया जाय वह सकट से दूर रहेगा।

वह दीर्घ काल तक कायम रह सकता है।

४५

अत्यन्त अत्रुटित (घट) को दरार खाए हुए के समान समझो, और उपयोग करने से यह टूटेगा नही। पूरे भरे हुए (घट) को रिक्त समझो और उपयोग करने से यह सूखेगा नही।

सरलतम को वक्र समझो, निपुणतम को कुरूप, अत्यत

वाक्पुट को अस्फुट वक्ता।

भूमि पर पदाघात करना शीत को पराजित कर सकता है, किन्तु स्थिरता उष्णता को पराजित करती है।

पवित्रता और स्थिरता आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबको सुधारती है।

४६

जब साम्राज्य के पास मार्ग होगा, तेज दौड़ने वाले घोड़े (भी) अपनी लीद के लिए घुड़साल मे रख दिये जायँगे।

जब साम्राज्य के पास मार्ग नही रहेगा, तब युद्ध के घोड़े किसी उपनगर मे पाले जायँगे।

इच्छा के अनुमोदन करने से बढ़कर अन्य कोई अपराध नही है।

कितना पर्याप्त है यह न जानने से बढ़कर अन्य कोई विपत्ति नही है।

प्राप्त करने की इच्छा से बढ़कर अन्य कोई दोष नही है।

क्योकि पर्याप्त पर्याप्त है यह जानना सदा पर्याप्त को प्राप्त करना है।

४७

घर से बाहर निकले बिना आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबको जानना !

खिड़की से बाहर झाँके बिना आकाश के मार्ग को देखना !

जो जितना ही आगे बाहर निकल जाता है वह उतना ही कम जानता है।

अतएव: सत पुरुष बिना यात्रा के ज्ञान प्राप्त करता है, (वस्तुओं को) बिना देखे ही उनका नामकरण करता है, बिना कार्य किये प्राप्त करता है।

४८

विद्या का अभ्यास करो और प्रतिदिन वृद्धि होगी।

मार्ग का अभ्यास करो और प्रतिदिन ह्रास होगा। ह्रास और फिर ह्रास, जब तक कि यह अकर्म को प्राप्त न हो जाय।

कुछ नही करने से ऐसी कोई वस्तु नही है जो न की गई हो।

४९

सन्त पुरुष का मन स्थिर नही रहता। वह लोगों के मन को अपना बना लेता है, (यह कहकर) :

"अच्छे के साथ मैं अच्छी तरह वर्ताव करता हूँ और जो अच्छा नही उसके साथ भी मैं अच्छा वर्ताव करता हूँ; इस प्रकार मैं अच्छाई को प्राप्त करता हूं। जो सद्निष्ठा वाले हैं उनके प्रति मैं सद्निष्ठापूर्वक वर्ताव करता हूँ और जो सद्निष्ठा वाले नही हैंउनके प्रति भी मैं सद्निष्ठा का वर्ताव करता हूँ, इस प्रकार मैं सद्निष्ठा प्राप्त करता हूँ।"

सत पुरुष आकाश के नीचे जो कुछ है उस सवके प्रति कोई भेद-भाव नही रखता, वह अपने हृदय को आकाश के नीचे जो कुछ है उस सवके प्रति निष्पक्ष वनाता है। लोग अपने कानो और आँखो को उस पर एकाग्र करते हैं और सत पुरुष उन सवसे शिशु-जैसा आचरण करता है।

५०

अद्भुत होकर (मनुष्य) पैदा होता है, प्रवेश करके वह मरता है।

जीवन के अनुगामी दस मे से तीन हैं, मृत्यु के अनुगामी दस मे से तीन हैं, और मनुष्य जो जीवन को जीवन समझते हुए, अपने प्रत्येक कार्य मे मृत्युस्थल की ओर उन्मुख होते है, वे भी दस मे से तीन हैं।

ऐसा क्यो है? क्योकि अतिरेक पूर्ण व्यवहार के कारण वे जीवन को जीवन मानते हैं।

क्योकि निश्चय ही मैंने सुना है कि जो जीवन पर दृढ अधि-

कार रखता है, स्थल मार्ग द्वारा यात्रा करते हुए, उनके सामने न तो चीते आते हैं और न गैंडे, तथा युद्ध के लिए जाते हुए वह कवच नही पहनता और न शस्त्र ही धारण करता है। गैंडे को कोई जगह न मिलेगी जहाँ वह अपने सीग मार सके, चीते को कोई जगह न मिलेगी जहाँ वह अपने पजे जमा सके, शस्त्रों को कोई जगह न मिलेगी जहाँ वे अपने फलों को घुसा सके। ऐसा क्यों है ? क्योकि उसका कोई मृत्युस्थेल नही है।

५१

वह मार्ग उन्हें उत्पन्न करता है, गुण उन्हे पालता है, वस्तुएँ उन्हें आकृति प्रदान करती है, वातावरण उनके विकास को पूर्ण करता है।

अतएव दस सहस्र वस्तुओ में से ऐसा कोई नही जो मार्ग का सम्मान करता है और गुण का मूल्य आँकता है।

मार्ग का सम्मान करना और गुण का मूल्य आँकना किसी के आदेश से नही होता, बल्कि यह सदा स्वय स्फूर्त्त होता है।

क्योकि मार्ग उत्पन्न करता है, गुण पालन करता है। वे बढ़ते हैं, पुष्ट होते है, सम्पन्न होते है, मार्गदर्शन करते हैं, अवलबन देते हैं और आश्रय देते हैं।

वे उत्पन्न करते है और पालन करते है, वे उत्पन्न करते हैं लेकिन अधिकार में नही कर लेते, वे क्रियाशील होते है लेकिन (परिणाम पर) निर्भर नही रहते, वे वृद्धि को प्राप्त होते है

लेकिन नियंत्रण नही करते।

जब कोई कार्य सम्पन्न हो जाता है वे उस पर आश्रित नही रहते। निश्चय ही केवल इसीलिए कि वे उस पर आश्रित नही रहते, वे स्वय पीछे नही हटते।

यह रहस्यमय गुण कहा जाता है।

५२

आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबकी प्रादुर्भूति है जिसे आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबकी जननी माना जा सकता है। जननी को पा लेने के बाद बच्चो को हम पहचान सकते है। यदि बच्चो को जानकर, फिर भी कोई जननी के पास ही रहता है, अपने जीवन के अत तक वह सकट में नही पडता।

इसके दरारो को बन्द कर दो, इसके द्वारो को बन्द कर दो और शरीर की (स्वभाविक) पूर्णता तक (तुम्हारी शक्ति) निष्क्रिय न होगी।

इसके दरारो को खोल दो, इसकी क्रियाओ को प्रोत्साहन दो और शरीर की (स्वाभाविक) पूर्णता तक कोई भी उपयोगी न होगा।

जो लघु है उसे देखना यह (स्पष्ट) दृष्टि है, जो निर्बल है उस तक रहना शक्ति है।

यदि प्रकाश का उपयोग करते हुए कोई अपनी दृष्टि को पुन. प्राप्त करता है तो शरीर को हानि नही होगी। "यह जो

स्थायी है उसका अभ्यास करना" कहा जाता है।

५३

कल्पना करो कि केवल कम-से-कम ज्ञान के अश द्वारा मुझे महान् मार्ग पार करना हो, तो मैं केवल एक ओर मुड़ने मे डरूँगा। यद्यपि महान् मार्ग बिलकुल समतल है, लोग लघु मार्गो को पसद करते है।

जब न्यायालय पूर्ण रूप से शुद्ध किया गया हो, किन्तु खेत घास-पात से भरे हो और कोठार खाली हो, (शासक) सजे हुए और बेल-बूटे कढे हुए वस्त्र पहनते हो, तेज तलवार कमर मे बाँधते हो, जो पेटू हो और अनावश्यक परिग्रह रखते हों—इसे मैं लूटना और डीग मारना कहता हूँ।

यह निश्चय ही मार्ग के प्रतिकूल है।

५४

जो अच्छी तरह रोपा जाता है उसका उन्मूलन नही होता।

जो कसकर पकड़ लिया जाता है वह छीना नही जाता।

पुत्र और पौत्र तब उनके बलिदानों मे बाधा उपस्थित नही करेंगे।

यदि कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व मे (उस मार्ग का) आचरण

करता है, उसका गुण असलियत होगा।

यदि कोई व्यक्ति इसका अपने परिवार में आचरण करेगा, उसका गुण सम्पन्नता होगा।

यदि कोई व्यक्ति अपने गाँव मे उसका आचरण करेगा, उसका गुण दीर्घकालिकता होगा।

यदि कोई अपने राज्य मे उसका आचरण करेगा, उसका गुण समृद्धि होगा।

यदि कोई अपने साम्राज्य में उसका आचरण करेगा, उसका गुण सार्वभौमिकता होगा।

क्योंकि अपने व्यक्तित्व के दृष्टिकोण से कोई दूसरे व्यक्तियों को देखता है, अपने परिवार के दृष्टिकोण से दूसरे परिवार को, अपने गाँव के दृष्टिकोण से दूसरे गाँव को, अपने राज्य के दृष्टिकोण से दूसरे राज्यो को और अपने साम्राज्य के दृष्टिकोण से उस साम्राज्य को देखता है।

यह मैं कैसे समझूँ कि यह इस रूप से साम्राज्य के लिए है ?

इसके द्वारा।

५५

किसी भी परिपूर्णता की जो कि अपने मे गुण को धारण करता है, एक शिशु की परिपूर्णता के साथ तुलना की जा सकती है।

विषैले कीट इसे डक नही मरेंगे, जगली पशु इस पर नही

झपटेंगे और न शिकारी पक्षी इस पर पजा मारेंगे। यद्यपि इसकी हड्डियाँ निर्बल है और इसके स्नायु कोमल है, उसमे पकड़ने की एक दृढ शक्ति है। यद्यपि इसे अभी भी पुरुष और स्त्री की एकता का पता नही, इसका पुरुष सदस्य हलचल पैदा कर देगा। इसका कारण यह है कि (इसके) सूक्ष्म तत्त्व ने अत्यधिक (वीर्यता) प्राप्त की है। यद्यपि यह सारे दिन चीखता रहे, फिर भी उसके स्वर में खरखराहट उत्पन्न नही होगी। इसका कारण यह है कि (इसके) स्वाभाविक सामंजस्य ने अत्यधिक (वीर्यता) प्राप्त की है।

स्वाभाविक सामजस्य को समझने का अर्थ है स्थिर रहना।
स्थिर रहने को समझने का अर्थ है प्रबुद्ध होना।
जीवन को बढाने का अर्थ है बुराई को निमंत्रित करना।
मन के साथ प्राणभूत श्वास को नियत्रित करने का अर्थ है जड़ता।

जब वस्तुएँ परिपक्व हो जाती है तब वे अपनी अवस्था मे आ जाती हैं। (ऐसा नियन्त्रण) मार्ग के विरुद्ध है। जो मार्ग के विरुद्ध है उसका शीघ्र ही अन्त होगा।

५६

वह अपने छिद्रो को भर देता है, तब वह अपने द्वारो को बन्द कर देता है।

वह धारा को कुंद कर देता है, वह गुत्थियों को खोल देता

है, वह प्रकाश को मद कर देता है, वह पगडंडियो को समतल कर देता है।

इसे रहस्यमयी समता कहते है।

क्योकि उसे प्राप्त करने में न तो कोई उसके समीप ही आ सकता है, न दूर ही रह सकता है, न कोई उससे लाभान्वित हो सकता है और न उससे उसे हानि ही पहुँचती है, न कोई उससे सम्मान ही प्राप्त कर सकता है और न अपमान का ही भागी होता है।

अतएव आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबमें वह सर्वाधिक पुरस्कृत है।

५७

किसी राज्य का सुधार द्वारा शासन किया जा सकता है और उसे युद्ध-कौशल से जीता जा सकता है, किन्तु साम्राज्य अकर्म से प्राप्त किया जाता है।

साम्राज्य निरन्तर अकर्म में रत रहने से प्राप्त किया जाता ह। ज्यो ही कोई कर्मरत होता है वह साम्राज्य को प्राप्त करने के अयोग्य हो जाता है।

मैं यह कैसे समझूँ कि यह ऐसा ही है? इसके द्वारा :

साम्राज्य मे जितने ही निषेध और वर्जन होते हैं उतने ही लोग अधिक दरिद्र होते हैं।

जितने ही अधिक उपयोगी अस्त्र लोगों के पास होगे, उतने

ही राज्य और राजवंश अव्यवस्थित होंगे।

जितने ही चालाक कारीगर होंगे, उतने ही विचित्र औजार बनेंगे।

जितने ही अधिक कायदे और कानून जारी किये जायँगे उतने ही अधिक चोर और लुटेरे होंगे।

अतएव एक संत ने कहा है :

"यदि मैं कुछ भी करने का अभ्यास करता हूँ, तो लोग अपने-आप ही बदल जायँगे। यदि मैं स्थिरता से प्रेम करता हूँ तो लोग अपने-आप ही सुधर जायँगे।

यदि मैं अकर्म का अभ्यास करूँ तो लोग अपने-आप ही धनी बन जायँगे।

यदि मैं इच्छा रहित होने का अभ्यास करूँ तो लोग अपने-आप ही सरल बन जायँगे।"

५८

यदि सरकार हीन दृष्टि वाली है तो लोग अपराध रहित होंगे।

यदि सरकार दूर दृष्टि वाली है तो लोग अपराधों से भरे होंगे।

दुर्भाग्य वह है जिस पर सौभाग्य निर्भर होता है।

सौभाग्य वह है जिसमें दुर्भाग्य छिप जाता है।

दोनो की चरम सीमा को कौन जान सकता है ?

क्योकि सामान्य अवस्था नही रहती, जो ठीक है वह विचित्र का रूप ले लेता है और जो अच्छा है वह उसकी बुराई का रूप ले लेता है, लेकिन लोग वास्तव मे दीर्घ काल तक धोखे मे रहते हैं।

अतएव सत्पुरुष विना काटे-छाँटे समरूप रहता है, वह विना नुकीला वने कोण-जैसा होता है, वह विना फैले हुए ऋजु होता है, वह विना चमकाये हुए भी चमकदार होता है।

५९

मनुष्यो पर शासन करने और स्वर्ग की सेवा करने के लिए आत्मसयम के बराबर कुछ नही है।

इसलिए क्योकि आत्मसयम है, इसका अर्थ है अपने-आपको (मार्ग पर) जल्दी ही लगाना।

अपने-आपको जल्दी ही लगाने का अर्थ है गुण की दुगुनी (फसल) समेटना।

यदि किसी ने गुण की दुगुनी (फसल) समेटी है, ऐसी कोई वस्तु नही है जिसके योग्य कोई व्यक्ति न हो। यदि ऐसी कोई वस्तु नही जिसके योग्य कोई न हो। कोई भी (उस सामर्थ्य की) चरम सीमा को नही जानता। यदि कोई भी चरम सीमा को नही जानता है, वह राज्य को प्राप्त कर सकता है। राज्य को प्राप्त करने की "मातृशक्ति" बहुत समय तक बनी रह सकती है।

इसका अर्थ है कि गहरी जड और सुदृढ नीव दीर्घ जीवन

और दीर्घकाकिकता का मार्ग है।

६०

किसी बड़े राज्य का शासन करना एक छोटी मछली को पकाने के समान है।

यदि कोई मार्ग के अनुसार आकाश के नीचे जो कुछ है उस सब पर शासन करता है (मृतक की) प्रेतात्मा अपने-आपको आत्माओ के रूप में प्रकाशित नही करेगी। इसका यह अर्थ नही कि ये प्रेतात्माएँ आत्माएँ नही है, किन्तु ये आत्माएँ मनुष्यो को हानि न पहुँचायँगी। जैसे कि आत्माएँ मनुष्य को हानि न पहुँचायँगी वैसे ही सत पुरुष लोगो को हानि न पहुँचायँगे।

यदि निश्चय ही दोनो एक-दूसरे को हानि नही पहुँचाते, उनके गुण एक सर्वसामान्य अन्त के प्रति अभिमुख होंगे।

६१

एक बड़ा राज्य नीचे को बहने वाली नदी है। यह आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबके (जल का) अभिमुख बिन्दु है। यह आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबकी स्त्री है। स्त्री सदैव शाति से पुरुष को पराजित करती है; शान्ति से वह उसके नीचे रहती है।

अतएव एक छोटे-से राज्य के नीचे जाने से एक बड़े राज्य को कुछ थोडा ही लाभ होता है और अपने-आपको एक बड़े राज्य के नीचे करने से एक छोटा-सा राज्य वड़ा बन जाता है। कोई नीचा होने से प्राप्त करता है, कोई नीचा होकर प्राप्त करता है। एक वड़ा राज्य मनुष्यो को एकतावद्ध करने और उन्हे पालन-पोषण करने की ही केवल इच्छा करता है, एक छोटा राज्य उचित व्यवहार किये जाने और दूसरो की सेवा करने की ही केवल इच्छा करता है। जिससे प्रत्येक व्यक्ति को जो वह चाहता है मिल जाय। वडे को अवश्य ही छोटा होना चाहिए।

६२

दस सहस्र वस्तुओ का मार्ग किसी घर के दक्षिण-पश्चिमी कोने की भाँति है। यह अच्छे का खजाना है और वुरे का आश्रय है।

अच्छे शब्द सम्मान खरीद सकते है, अच्छा आचरण किसी को दूसरे से ऊपर उठा सकता है।

अतएव जव स्वर्ग-पुत्र का अभिषेक होता है अथवा तीन कुलीन मन्त्री पदासीन होते है, यद्यपि वे मणिचक्र धारण कर सकते हैं और किसी रथ या नाव के पूर्ववर्ती होते हैं, शान्त वैठ जाना और उस मार्ग में प्रगति करना यह उनके लिए वेहतर होगा।

प्राचीन लोगों ने इस मार्ग को इतना ऊँचा स्थान क्यो दिया ? क्या उन्होंने नही कहा, "जो खोज करता है वह उसके पास पहुँच जाता है, जो मर्यादा का उल्लघन करता है वह इससे बच जाता है !"

अतएव आकाश के नीचे जो कुछ है उस सबमे यह सबसे अधिक मूल्यवान है ।

६३

बिना किये करो, अकर्म से कर्म करो, स्वादहीन का स्वाद लो, छोटे को बड़ा समझो, बड़े को छोटा ।

जहाँ सरल है वहाँ कठिन की योजना बनाओ, जहाँ सूक्ष्म है वहाँ स्थूल की योजना बनाओ ।

सबसे कठोर वस्तुएँ ससार मे उससे आरंभ होती है जो सबसे आसान है, सबसे बड़ी वस्तुएँ ससार में उससे आरभ होती है जो सूक्ष्म है ।

अतएव सत पुरुष कभी बडा काम नही करता और इसलिए जो महान् है वह उसे प्राप्त करने मे समर्थ है ।

अब, जो बिना सोचे प्रतिज्ञा करेगा वह थोड़ी भी आस्था न रखेगा । जिसे बहुत आसानी मालूम होती है उसे बहुत कठिनता मालूम होगी ।

अतएव सत पुरुष (सरल) को भी कठिन समझते हुए अन्त में ऐसी कोई चीज नही देखेगा जो कठिन हो ।

६४

जो रुक गया है उसे पकड लेना सरल है।

जो अभी तक प्रकाशित नही हुआ है उसको पहले मे सोचना सरल है।

जो जल्दी चटक जाता है वह पिघलने मे आसान है।

किसी वस्तु के होने के पहले से उसे कर लो, अव्यवस्था होने के पहले ही व्यवस्था का निर्माण करो।

एक वालिश्त जितना वृक्ष एक नन्हे से तन्तु से वडा हुआ है।

एक नौ मजिल ऊँची मीनार मिट्टी के ढेर से उठाई गई है।

एक हजार मील लवी यात्रा एक पद-चाप से आरभ हुई है।

अपने कार्यों को आगे वढाने मे 'लोग प्राय: उन्हे विगाड देते है जवकि वे प्राय पूर्ण होने को होते हैं।

जितनी आरभ की चिन्ता करते हो उतनी ही अन्त की भी करो, तव कोई भी कार्य नही विगड़ेगा।

अतएव संत पुरुष इच्छा-रहित होने की आकांक्षा करता है और ऐसी वस्तुओ को महत्त्व नही देता जिन्हे प्राप्त करना कठिन है। वह नही सीखने के लिए सीखता है और जिसके पास से लोग निकल जाते है उसकी ओर उन्मुख होता है।

इस प्रकार वह दस सहस्र वस्तुओं के स्वाभाविक क्रम को बनाय रखता है, लेकिन वह आचरण करने का साहस नही करता।

६५

जो उस मार्ग के पालन करने में निपुण थे, समय के उन पुराने लोगो ने, जन साधारण को प्रवुद्ध करने के उपयोग में लाने की अपेक्षा, लोगो को मूर्ख बनाने के लिए इसका उपयोग किया है।

यदि लोगो पर राज्य करना कठिन है तो इसका कारण अत्यधिक ज्ञान है।

- अतएव वह जो ज्ञान के द्वारा राज्य का शासन करता है वह राज्य के एक लुटेरे के समान है। वह जो ज्ञान के द्वारा राज्य का शासन नही करता वह राज्य के लिए वरदान है।

वह जो इन दोनो बातो को जानता है वह माप का भी सूक्ष्म परीक्षण करता है।

सदा यह जानते रहना कि माप का किस प्रकार सूक्ष्म परीक्षण करना चाहिए, यह रहस्यमय गुण कहा जाता है। रहस्यमय गुण गूढ़ है, अति दूरगामी है, और विपरीत दिशा मे वस्तुओ पर प्रभाव डालता है, जब तक कि अन्त में वह महान् सारूप्य को प्राप्त न कर ले।

६६

जिसके कारण नदी और समुद्र भी घाटियों के राजा होने के योग्य है, वह उनकी योग्यता है कि वे उनकी (घाटियों) अपेक्षा

नीचे हैं। यही कारण है कि वे सौ घाटियों के शासन होने के योग्य हैं।

अतएव यदि संत लोगों के ऊपर रहना चाहता है, उसे अपने शब्दों मे नीचा होना चाहिए। यदि वह लोगो के सामने रहना चाहता है, उसे अपने व्यक्ति रूप मे पीछे रहना चाहिए।

अतएव संत ऊपर रहता है लेकिन लोग उसके भार को महसूस नहीं करते, वह सामने रहता है लेकिन लोगों को इससे चोट नहीं पहुँचती।

अतएव आकाश के नीचे जो कुछ है वह सब प्रसन्नतापूर्वक उसे आगे बढ़ायगा और (उसमे) थकेगा नहीं। क्योंकि वह उद्योग नहीं करता, कोई भी उसके साथ उद्योग करने के लिए समर्थ नहीं है।

६७

समस्त संसार कहता है कि मेरा मार्ग यद्यपि महान् है, वह रूढ़िमुक्त दिखाई देता है।

वास्तव मे इसलिए कि वह महान् है, वह रूढ़िमुक्त दिखाई देता है। यदि वह रूढ़िमुक्त होता, बहुत समय पहले वह सूक्ष्म हो जाता।

मेरे पास तीन निधियाँ है जिन्हे मैं सँभाले हूँ। और जिनकी रक्षा करता हूँ :

पहली सहिष्णुता है।

दूसरा आत्मसंयम है।

तीसरा है संसार में प्रथम होने का साहस न करना।

सहिष्णुता के साथ मैं साहसी होने के योग्य हूँ।

आत्मसयम के साथ मैं उदार होने के योग्य हूँ।

संसार में प्रथम होने का साहस न रखते हुए, मैं सब "सामंत राजाओं" में प्रमुख होने के योग्य हूँ।

यदि आज कोई सहिष्णुता का त्याग करता है और केवल साहसी है, यदि कोई आत्मसंयम का त्याग करता है और केवल उदार है, यदि कोई अन्त मे रहने का त्याग करता है और केवल प्रथम है, तो यह मृत्यु है!

निश्चय ही वह जो सहिष्णुता से लड़ाई करता है वह विजयी होता है, जो इससे अपनी रक्षा करता है वह सुरक्षित है।

स्वर्ग जब उसकी रक्षा करता है तो वह सहिष्णुता के साथ रक्षा करता है।

६८

एक अच्छा कप्तान उग्र नही होता।

एक अच्छा योद्धा क्रुद्ध नही होता।

एक अच्छा विजेता अपने शत्रुओ का सहयोग नही लेता।

मनुष्यो को काम मे लगाने वाला एक अच्छा व्यक्ति अपने-आपको उनसे छोटा बना लेता है।

यह उद्योग न करने का गुण कहा जायगा। यह मनुष्यो का उपयोग करने की शक्ति कही जायगी। यह स्वर्ग के साथ सास्म्य की पराकाष्ठा कही जायगी।

६९

किसी पुराने युद्ध-विशारद ने कहा है

"मै मेजवान होने का साहस नही करता, मैं मेहमान होना पसद करता हूँ। मैं एक इच आगे बढने का साहस नही करता, मै एक फुट पीछे रहना पसन्द करता हूँ।"

यह कहा जाता है : बिना प्रयाण किये प्रयाण करना, बिना अस्त्र धारण किये अपनी बाँहे चढाना, बिना तलवार के तलवार खीचना, बिना शत्रु के उस पर आक्रमण करना।

अपने शत्रु को अपने से हीन समझने से बढकर दूसरी कोई आपत्ति नही है।

यदि मै शत्रु को हीन समझूं, मुझे अपने खजाने के चले जाने का खतरा है।

क्योकि, जब परस्पर विरोधी शत्रुओ मे शस्त्र चलते है, जो हार मान लेता है वह विजयी होता है।

७०

मेरे शब्द समझने में बहुत आसान है और अमल में लाने में भी बहुत आसान हैं; लेकिन सारी दुनिया में ऐसा कोई नही जो उन्हें समझ सकता हो और अमल मे ला सकता हो।

मेरे शब्दों में एक व्यवस्था है, मेरे कार्यों का एक निर्देशक है।

सचमुच इसीलिए क्योंकि ये नही समझे जाते, आदमी मुझे नही समझते।

वे जो मुझे समझते हैं विरले है, जो मेरे आदर्श पर अपने को ढालते है उनका अत्यन्त आदर किया जाता है।

इस प्रकार सन्त बालो का बना वस्त्र पहनता है, लेकिन अपने वक्षस्थल मे वह मणि धारण करता है।

७१

जानने को जानना न समझना ही सर्वोत्तम है।

न जानने को जाना हुआ समझना रोग है।

वास्तव मे उस रोग का रोगी होकर ही मनुष्य रोगी नही होता।

सत रोगी नही है, क्योकि वह उस रोग का रोगी है।

अतएव वह रोगी नही है।

७२

यदि भयानक (वस्तु) से लोगो को डर नही लगता तो भय और अधिक हो जायगा।

उनको अपने घरो में बन्द करके न रखो, उन्हें अपने जीविकोपार्जन मे ही मत थका दो। सचमुच केवल इसलिए कि वे थके नही हैं, वे थकेंगे नही।

अतएव सत पुरुप अपने-आपको जानता है, लेकिन अपना प्रदर्शन नही करता, वह अपने बारे मे सावधान है, लेकिन अपनी कीमत नही करता, क्योकि वह एक को त्याग देता है और दूसरे को पसद करता है।

७३

जो साहसिक कार्यों मे शूर है वह मारा जाता है।

जो असाहसिक कार्यों मे शूर है, वह जीवित रहेगा।

इन दो मार्गो मे एक लाभदायक है और दूसरा हानि-कारक। कौन इसका कारण जानता है कि स्वर्ग किससे घृणा करता है?

स्वर्ग का मार्ग है उद्योग नही करना और फिर भी विजयी होने के लिए समर्थ होना, बोलना नही फिर भी प्रत्युत्तर देने के लिए समर्थ होना, बुलाना नही फिर भी वस्तुओ को स्वयमेव आने देना, मन्द होना फिर भी अच्छी तरह योजना के लिए

समर्थ होना।

स्वर्ग का जाल विस्तृत है, यद्यपि इसके छेद बहुत दूर-दूर हैं, (उनमे से) कोई भी वस्तु बाहर नही जाती।

७४

यदि लोग मृत्यु से नही डरते, उन्हे मृत्यु से क्यों डराया जाय ?

यद्यपि कोई लोगो को सदा मृत्यु से डरा सके और उन्हे पकडकर मार सके जो कि असाधारण वस्तुओ को बनाते है। कौन इस प्रकार आचरण करने का साहस करेगा ?

हमेशा एक मुख्य जल्लाद होता है जो वध करता है। मुख्य जल्लाद की जगह वध करना कहा जा सकता है : किसी होशियार बढई की जगह काटना। इस तरह होशियार बढई की जगह खुद काटने से शायद ही कोई अपने हाथो को काटने से बचा सकेगा।

७५

लोग भूखों मरते है, क्योकि उनके करों का रुपया उनके बड़े अधिकारियो द्वारा खा लिया जाता है। इसीलिए वे भूखों मरते है।

लोगो पर शासन करना कठिन है, क्योकि उनके बड़े अधि-

कारी हस्तक्षेप करते है। इसीलिए उन पर शासन करना कठिन है।

यदि मृत्यु के संबंध मे लोग अगंभीरता से सोचते हैं, इसका कारण है अतिरेकपूर्ण ढंग, जिसमें वे जीवन को पाने की खोज करते हैं। इसीलिए वे मृत्यु के सम्बन्ध में हल्के ढंग से सोचते हैं।

सचमुच जीवन को मूल्य प्रदान करने की अपेक्षा जीवन के लिए सक्रिय न होना अधिक बुद्धिमत्ता है।

७६

मनुष्य जन्म के समय कोमल और निर्मल होता है, मृत्यु के समय वह कठोर और कड़ा हो जाता है।

दस सहस्र वस्तुएँ, पेड और पौधे, जब तक जीवित हैं, कोमल और नाजुक है, अपनी मृत्यु के समय वे सूखे और मुरझाए हुए हो जाते हैं।

क्योंकि जो कठोर और कड़ा है, मृत्यु का अनुगामी है, जो कोमल और निर्बल है, वह जीवन का अनुगामी है।

अतएव यदि कोई अस्त्र बहुत कठोर है, वह नष्ट हो जाता है, यदि कोई वृक्ष बहुत कठोर है तो टूट जाता है।

जो भी कुछ कठोर या कडा है वह नीचे रख दिया जाता है· जो कोमल और निर्बल है वह ऊपर रखा जाता है।

७७

ओ हो ! स्वर्ग का मार्ग धनुष के मोड़ की भाँति है ! जो ऊपर का भाग है वह नीचे दबा दिया जाता है, जो नीचे का भाग है वह ऊपर उठा दिया जाता है, जो बचा हुआ है उसे कम कर दिया जाता है, कमी पूरी कर दी जाती है।

स्वर्ग का मार्ग वहाँ कम होता है जहाँ पर कि अतिरिक्तता है और वहाँ पूर्ति करता है। जहाँ पर कि अभाव है। मनुष्यो का मार्ग इस प्रकार का नही है; वे घटा देते हैं जहाँ पर कि अभाव है और अर्पण करते हैं जहाँ पर कि अतिरिक्तता है।

अपनी अतिरिक्तता को वहाँ कौन देने को समर्थ है जहाँ कि अभाव है ? केवल वही जिसके पास मार्ग है।

अतएव संत जब सक्रिय होता है, (परिणाम पर) भरोसा नही रखता; जब कार्य सम्पन्न हो जाता है, वह उसमें आश्रय नही लेता।

संत सचय नही करता। प्रत्येक वस्तु को दूसरे की समझते हुए भी उसके स्वय के पास प्रचुरता है। प्रत्येक वस्तु दूसरो को देते हुए भी उसके स्वय के पास उसका आधिक्य है।

स्वर्ग के मार्ग से लाभ होता है, हानि नही। सत का मार्ग क्रियाशील होना है, उद्योग करना नहीं।

उसको अपनी योग्यता प्रदर्शित करने की कोई इच्छा नही है।

७८

निर्बल सबल को जीत लेता है और कोमल कठोर को जीतता है।

यद्यपि संसार मे हर कोई इसे जानता है, लेकिन कोई भी इसका आचरण नही कर सकता।

अतएव एक संत ने कहा है "जो राज्य की गंदगी लेता है, वह भूमि और धान्य की वेदी का स्वामी कहा जाता है, वह जो राज्य की बुराइयो को लेता है आकाश के नीचे जो सब-कुछ है उस सबका राजा कहा जाता है।"

सीधे शब्द विरोधात्मक मालूम पडते हैं।

७९

यद्यपि महान् कष्ट को शान्त किया जा सकता है फिर भी कुछ कष्ट रहना तो निश्चय है। कष्टो के स्थान पर गुणो का प्रतिपादन करके। कैसे कोई दूसरो के साथ अच्छी तरह खड़ा रह सकता है ?

अतएव संत, यद्यपि वह बाएँ हाथ मे अंकयष्टि धारण करता है, लोगो को वह बुलाकर नही पूछता।

जिसमें गुण है वह अंकयष्टि पर नियन्त्रण करता है, जिसमे गुण नही है वह कर-संग्रह पर नियन्त्रण रखता है।

आकाश के मार्ग मे कोई पक्षपात नही है, यह [illegible]

अच्छी तरह खड़ा रहने का सदैव अवसर प्रदान करता है।

८०

थोड़े से निवासियों वाला एक छोटा-सा गाँव, (वहाँ के लोग) यद्यपि वहाँ औजार होगे जो दस या सौ आदमियों का काम कर सकते हो, उन्हे प्रयोग में न लाने के लिए प्रवृत्त किये जा सकते हैं !

जहाँ लोग प्रवृत्त किये जा सकते है मृत्यु को गंभीरता से समझने के लिए, दूर स्थानो पर जाने के लिए नही !

जहाँ, यद्यपि वहाँ नावें और गाड़ियाँ होंगो, लेकिन उनमें लादने के लिए कुछ भी न होगा, जहाँ अश्वारोही सैनिक और अस्त्र होगे, लेकिन कही भी कवायद करने के लिए कोई स्थान न होगा।

जहाँ लोगों के गाँठ वाली डोरियो का फिर से प्रयोग करने के लिए, अपने भोजन का स्वाद लेने के लिए, अपने वस्त्रो की प्रशंसा करने के लिए, अपने स्वयं के घरों में आराम करने के लिए और अपने रीति-रिवाजो में ही आनन्द प्राप्त करने के लिए प्रवृत्त किया जा सकता है !

जहाँ यद्यपि कोई पड़ोसी गाँव दिखलाई दे सकता है, जिसमें कि लोग मुर्गो का बाँग देना और कुत्तो का भोकना सुन सके, फिर भी वहाँ के निवासी जब तक कि वे वृद्धावस्था के कारण मर न जाएँ, एक-दूसरे से कभी न मिलेगे !

८१

जो जानता है वह बोलता नही ।
जो बोलता है वह जानता नही ।
जो निष्कपट है वह दिखावट नही करता।
जो दिखावट करता है वह निष्कपट नही है ।
जो अच्छा है वह झगड़ता नही ।
जो झगडता है वह अच्छा नही है ।
जो जानता है वह खिलवाड नही करता ।
जो खिलवाड़ करता है वह जानता नही है ।

●